स्त्रियों का ओज

लेखकः—

आचार्य चतुरसेन

★

प्रकाशकः—

गौतम बुक डिपो

नई सड़क, देहली।

मूल्य १॥)

प्रकाशक—

गौतम बुक डिपो

नई सड़क, देहली।

द्वितीय संस्करण

मुद्रक—
1975 धर्म प्रकाश सैहगल
जनरल प्रिंटिंग कम्पनी
दरियागंज, देहली

विषय-सूची

दो शब्द

यों तो सारे संसार में योद्धाओं का एक युग में सबसे ऊँचा स्थान था, यह वह समय था जब तलवार ही सब बातों का निर्णय करती थी; परन्तु राजपूतों का जीवन पृथ्वी के सब योद्धाओं से अद्भुत रहा है। उनके ओज और तेजपूर्ण जीवन में राजपूत स्त्रियों का जितना सहयोग रहा है उतना कदाचित् ही पृथ्वी की किसी जाति की स्त्रियों का रहा हो। इस बात का महत्व तब और बढ़ जाता है जबकि स्त्रियों के ये असाधारण साहसिक कार्य केवल उन के आत्म-सम्मान की भावना के आधार पर पाए जाते हैं।

राजपूतों को जीवन में गहरे से गहरे संघर्ष होने के कारण अद्वितीय योद्धा बनना पड़ा। कष्टकर जीवन व्यतीत करने और विषय परिस्थियों में रहने के कारण उनकी स्त्रियों में भी एक अपूर्व तेज और शौर्य्य का संचय हुआ। प्राचीन क्षत्रियों के चरित्र में स्त्रियों के इस ओज के विशेष दर्शन नहीं होते। महाभारत के अद्वितीय युद्ध के बाद भी वहाँ सत्राणियाँ रो पीटकर अपने पति की चिता पर जल मरती हैं। उनके रोने की क्रन्दन-ध्वनि से मनमें करुण भाव पैदा होता है, परन्तु यह आधुनिक राजपूत-महिला रोना ही नहीं, असूँ गिराना भी नहीं जानती

वह विलाप अपने लिये अगौरव की बात समझती है। वह या तो पति के साथ ही लोहा लेती है, या शृङ्गार करके उसके साथ चिता में जल मरती है। उस के इस जल मरने में विविशता नहीं है—कर्त्तव्य, स्थैर्य, आत्मगौरव और अप्रतिम ओज है।

कुछ लोग कहते हैं कि राजपूतों की यह अत्यधिक हैकड़ी ही उनके विनाश का कारण बनी है। यह हो सकता है, परन्तु राजपूतों के जीवन की यही विशेषता भी तो है। राजपूत न तो पुरुष न स्त्रियाँ ही प्राचीन क्षत्रियों की भाँति विद्वान होते थे। प्राचीन क्षत्रियों की भाँति राजपूत रमणियों को न तो ललित कला की और न किसी राजनीति की ही शिक्षा दी जाती थी। फिर परिस्थिति उनके विपरीत भी थी, इससे उनकी शिक्षा के बहुत ही कम अवसर उन्हें मिल पाते थे। इतना होने पर भी उनके उच्च भावुक जीवन अक्षुण्ण थे, और यह सब केवल उनकी परंपरागत संस्कृति के कारण था। यदि हम यह कहें कि राजपूत जीवन में सामाजिक विकास यहाँ तक व्याप्त हो गया था, कि स्त्रियाँ पुरुषों की भाँति अपने जातीय स्वत्वों के लिये अपना बड़े से बड़ा बलिदान कर सकती थीं, तो यह अत्युक्ति नहीं।

राजपूत स्त्रियों के त्याग और वीरता की घटनाएँ असाधारण एवं अनगिनत हैं। उनमें से कुछ का दिग्दर्शन इस छोटी सी पुस्तक में दिया गया है। यह सत्य है कि आज राजपूताने के वे दिन नहीं हैं राजपूताना आज निर्जीव हाड़ का कंकाल हो रहा है, वहाँ की स्त्रियाँ आज भी स्वास्थ्य में उत्तम, अत्यन्त परिश्रमी कष्टसहिष्णु मृदु भाषिणी एवं सती होती हैं, परन्तु वे अविद्या और अन्ध विश्वासों से जकड़ी हुई हैं। बीसवीं शताब्दी ने जो नवीन जीवन संसार की स्त्री जाति को दान किया है, उससे वह बिल्कुल ही अपरिचित हैं, वे आज गौन

और बहुमूल्य कपड़ों से लदी हुई एक काठ पुतली की भाँति दीख पड़ती हैं। आज वीरत्व मर चुका है, वीरता की कदाचित मनुष्य जाति को अब कभी आवश्यकता न पड़ेगी, फिर भी दूसरे मानवीय गुणों का उदय तो मनुष्य जाति में हो ही रहा है, जिसमें स्त्रियों का बराबरी का भाग है। राजपूताने के मर्द भी आज कायर और भीरु हो गये हैं, तो वहाँ की स्त्रियों का तो कहना ही क्या है।

परन्तु देश में नवीन जागृति और जीवन उत्पन्न करने के लिये तो स्त्री जाति को जीवन प्रदान करने, उन्हें नवीन विकास में सहयुक्त करने की बड़ी आवश्यकता है, यदि हम इस आवश्यक कार्य की ओर उपेक्षाभाव रखते हैं। तो हम अपने सामूहिक जीवन का घात अपने ही हाथों करते हैं।

स्त्री-शक्ति देश की जागृति शक्ति है, उसके उद्धार से देश का उद्धार है, राजपूतों के शौर्य का बहुत बड़ा दायित्व राजपूत स्त्रियों पर ही है।

इस पुस्तक में मैंने प्रायः वही घटनाऐं दी हैं, जिन्हें लगभग सभी जानते हैं। हाँ शैली और शब्द योजना मेरी अपनी है। इन कहानियों में मैंने ऐतिहासिक आधार के साथ भावुकता को प्रधान रक्खा है। इन कहानियों को लिखने का मेरा उद्देश्य ऐतिहासिक घटनाओं का वर्णन ही नहीं, प्रत्युत स्त्री जाति के हृदय में एक विशेष उत्साह भरना है, और मैं आशा करता हूँ कि इसे पढ़ कर महिलाऐं अवश्य ही अपने हृदय में वीर भाव का उदय कर लेंगी।

संग्रह में कुछ कहानियाँ ऐसी हैं, जो अन्य प्रसिद्ध लेखकों के किसी बड़े उपन्यास में वर्णित घटनाओं के आधार पर लिखी

गई है विशेषकर पुस्तक की अन्तिम कहानी रूठी-रानी, जोधपुर के मुंशी देवी प्रसाद जी मुंसिफ. की एक छोटी सी पुस्तक के आधार पर उसके बहुत ही निकट है।

मैं आशा करता हूँ कि पाठक-पाठिकाएं इन कहानियों को पढ़कर न केवल आनन्द लाभ करेंगी, प्रत्युत अपने जीवन को भी ओज पूर्ण करेंगी।

संजीवन-इन्स्टीट्यूट
देहली
३१-७-१९३६

श्रीचतुरसेन वैद्य

दूसरे संस्करण की भूमिका

सन् १९३६ के बाद इस पुस्तक के दूसरे संस्करण का अवसर आज बारह वर्ष बाद प्राप्त हुआ है। चिरकाल से पुस्तक अप्राप्य रही है। अब इसे संशोधित रूप में मैं अपनी सहस्त्रों पुत्रियों को भेंट करते हुए अत्यन्त आनन्द और सुख की अनुभूति करता हूँ। यद्यपि इन बारह वर्षों के महाकाल ने शताब्दियों का अतिक्रमण किया है। फिर भी राजपूत बालाओं के तप त्याग और उनके ये रेखा चित्र तो सदैव ही उज्ज्वल और अक्षय प्रदीप्त हैं।

ज्ञान धाम,
दिल्ली-शाहादरा ता० १८-३-४९

चतुरसेन

लोहे का भय

(उद्भटवीर अमरसिंह ने शाहजहाँ के भरे दर्बार में सलावत खाँ को मार डाला और आगरे के किले की सफील पर से घोड़े सहित कूद कर भाग निकले। उन्हें उनके साले अर्जुन गौड़ ने धोखा देकर किले में लेजाकर मारडाला तथा बादशाह की आज्ञा से उनकी लाश चील कौओं के खाने के लिये बुर्ज पर डालदी गई। इस पर अमरसिंह की रानी ने पति के दासी जाऐ भाई बल्लू जी से सहायता मांगी। बल्लू जी ने अपमान को स्मरण कर सहायता देने से इन्कार कर दिया। इस पर उन की रानी ने उन्हें धर्षणा दी। और उनकी प्रेरणा से अब उन्होंने किले में जा साखा रचा।)

"महाराज की दुहाई, गजब हो गया महाराज ! महाराव रण बंका राठौर अमरसिंह मारे गये। बादशाह सलामत की आज्ञा से उनकी लाश बुर्ज पर नंगी करके डाल दी गई है जिस से चील और कौवे उसे दुर्दशापूर्वक खा जाँय। महारानी के पास जो थोड़ी सेना थी, वह लाश लाने के उद्योग में कट-मरी है। राजमहल की रक्षा केवल कुछ बाँदियां कर रही हैं। बादशाह सलामत ने क्रोध में आकर आज्ञा दे दी है कि महाराव का महल जमींदोज कर दिया जाय और उनके वंश का बच्चा बच्चा गिरफ्तार करके शाही हुजूर में उपस्थित किया जाय। बहूरानी अकेली असहाय अबला हैं, आप उनके पूज्य श्वसुर के स्थानापन्न और महाराव के चचा हैं, बहूरानी आपकी शरण हैं। उन्होंने आप से प्रार्थना की है कि महाराज मेरी प्रतिष्ठा की रक्षा करें, अपने वंश की रक्षा करें, मुझे पति का शरीर ला दें और मुझे निर्विघ्न सती होने की व्यवस्था करदें। इस विदेश में आप ही सगे हैं !"

"अभी कल ही तो महाराव अमरसिंह हमसे मिलकर गए थे। एक ही दिन में यह कैसी घटना हो गई ?"

"आज दर्बार में सलावत खां ने उनका अपमान किया था। उसे उन्होंने वहीं छाती में कटार मार कर मार डाला, फिर किले की सफील से कूद कर भाग भी आये। परन्तु महाराज ! कृतघ्न अर्जुन गौड़ ने अनर्थ किया।"

"कैसा अनर्थ !"

"वह धोखा देकर महाराव को क़िले में ले गया, बहूरानी को भी बहुत २ शपथ दे गया। वहाँ पीछे से अचानक वार करके राठौर को गिरा दिया।"

"हूं तो अब मुझ से क्या कहते हो ?"

महाराज ! बहूरानी आपकी शरण हैं। आप उनके श्वसुर और राठौर के चचा हैं। अपनी और उनकी कुल मर्यादा, धर्म और प्रतिष्ठा की रक्षा कीजिये।"

"(हंसकर) हम कब से उन के श्वसुर और चचा हुए ?" हम बाँदी-पुत्र हैं और वे रणबंका राठौर हैं। हमारी उनकी बराबरी ही क्या ? कल तक तो वे हमें विवाह, उत्सव आदि में भी बराबरी का आसन नहीं देते थे, इसमें उनकी कुलकान जाती थी, अब बहूरानी बाँदी-पुत्र की शरण क्यों ? उन से कह दो कि बूँदी से अपने उच्च कुलीन पीहर वालों को बुलालें, वे ही उन के कुल-धर्म और कुल-गौरव की रक्षा करेंगे। हम बाँदी-पुत्रों का कुल-धर्म ही क्या और कुल-गौरव ही क्या ?"

"महाराज, इस अवसर पर ऐसी बात न करिये। वहाँ अकेली अबलाएँ तलवारें चला रही हैं, यह समय इन बातों का नहीं।"

"परन्तु हम बाँदी-पुत्र भी तो हैं !"

"आपके रक्त में राठौर रक्त है !"

"फिर भी वह विशुद्ध नहीं।"

"यह समय इस विवेचना का नहीं।"

"जब अच्छे दिनों में हम नीच और पराये रहे तब अब सगे कैसे रहेंगे ?"

"महाराज, यह क्षत्रियों का धर्म है !"

"उनके लिये, जो उनकी प्रतिष्ठा करे।"

"बहूरानी आपकी पितृव्य की भाँति प्रतिष्ठा करती हैं।"

"इस मतलब के समय पर न ? और इस प्रतिष्ठा को हम प्राण देकर मोल लें ! हम जीवन भर तो बाँदी-पुत्र कहे जाकर तिरस्कृत होते रहे हैं यह देखो हमारी छाती अपमान की आग से फुंकी पड़ी है।"

" महाराज ! रक्षा करो, रक्षा करो, आप के भतीजे की लाश को कौवे-चील खा रहे हैं !!"

"हम उन के कुछ नहीं !"

"बहूरानी अभी शाही दरबार में अपमानित होंगी, वे आपकी कुल-वधू हैं।"

"उनके पीहर वाले बूँदी से आजावेंगे। वे बड़े बाँके योद्धा हैं, पल भर में उनके गौरव की रक्षा कर लेंगे।"

"तब क्या महाराज ! अबला असहाय राजपूतनी को आप सहाय न देंगे ?"

"वह हमारी कौन है ?"

"महराज का अन्तिम उत्तर क्या है ?"

"बूँदी से पीहर वाले कुलीन वीर बुला कर बहूरानी की प्रतिष्ठा की रक्षा की जाय।"

२

"महारानी ! अनर्थ होगया। महाराव अमरसिंह मारे गये और उनकी रानी का महल शाही सेना ने घेर रक्खा है, वहाँ अकेली स्त्रियाँ लोहा ले रही हैं। बहूरानी ने महाराज की शरण ली थी उन्होंने अस्वीकार कर दिया।"

"सुन चुकी हूँ। ठहर और जो कुछ मैं कहती हूँ सावधानी से सुन। अभी महाराज भोजन करने भीतर पधारेंगे। तू सभी सोने-चाँदी के बरतनों को यहाँ से उठा कर और छिपा कर रख दे तथा महाराज का भोजन लोहे के बर्तनों में परोस दे। यदि महाराज क्रुद्ध हों तो तू कुछ उत्तर न देना। मैं सब देख लूँगी।"

"जो आज्ञा।"

३

"हैं, यह कैसी मूर्खता है ? यह लोहे के बर्तनों में भोजन कैसा ? बाँदी ! कौन है ? किसने यह दुष्टता की है। मैं उसे कभी क्षमा न करूँगा। यह किसका काम है ? सामने आ।" (महारानी सामने आकर) "स्वामिन् ! क्या आज्ञा है ?"

"देखती हो, मेरा किसने यह अपमान किया है ? यह लोहे के पात्रों में भोजन.........? मैं अभी उसे तलवार से टुकड़े २ कर डालूँगा, क्या मेरा क्रोध तुम पर विदित नहीं ?"

"विदित है स्वामिन् ! आपका क्रोध, आपका तेज, प्रतिष्ठा, सम्मान, वीरता, इस तुच्छ नारी को विदित है। अन्ततः यह आपकी अर्धाङ्गिनी दासी ही तो है। यह दुष्टता किस दासी ने की है, उसे क्षमा नहीं किया जाना चाहिए ! नहीं तो आपका प्रताप आज ही नष्ट हो जायगा। (दासी से) अरी पापीष्ठा ! बोलती क्यों नहीं, अभागिनि ! क्या तू नहीं जानती कि महाराज लोहे से भय खाते हैं, तूने उन्हीं के सम्मुख लोहा रख दिया ? तेरी इतनी मजाल ? अरी क्या तू यह नहीं जानती कि यह किसी राजपूत की रसोई नहीं, बनिये का रसोई-घर है। यहाँ हीरे, मोती, सोना चाँदी रहने चाहिएँ या लोहा ? क्या तुझसे मैंने बारम्बार नहीं कहा था कि महाराज लोहे से डरते हैं, उनके सम्मुख कभी लोह न लाना। ठहर, मैं तुझे कुत्तों से नुचवाऊँगी।"

"महारानी ! तुम यह क्या कह रही हो ? क्या तुम पागल हो गई हो ? क्या कहा, मैं लोहे से भय खाता हूँ ! इस भुजदण्ड के बल पर और इस तलवार के जोर पर मैंने सहस्रावधि शत्रुओं के रुण्ड मुण्ड पृथक् किये हैं। कौन वीर रण-रङ्ग में मेरे सम्मुख खड़ा रह सकता है, और आज तुम मेरा यह अपमान करती हो, कहती हो मैं लोहे से डरता हूं। क्या मैं लोहे से डरता हूँ?"

"क्या तुम लोहे से नहीं डरते ? अभी तुम, जो अपने इन निरर्थक भुज-दण्डों की डींग हाँक चुके हो, क्या ये प्रकृत वीरों के भुज-दण्ड हैं ? यदि तुम लोहे से भय न खाते होते तो क्या यह सम्भव था कि तुम्हारे वंश के अनमोल पुत्र की लाश, जिसकी वीरता की धाक राजपूताने के घर घर में है, पशु की तरह नंगी, बुर्ज पर चील-कौवों के बीच खाने के लिये पड़ी होती ? तुम्हारी पुत्र-बधू की लाज लुट रही है, तुमने शरणागत होने पर भी स्त्री को निराश किया है और तुम इतने पर भी सोने-चाँदी के पात्रों में छत्तीस प्रकार के स्वादिष्ट भोजन गले से उतारने और इन वीर बाहुओं को पुष्ट करने, रसोई में पधारे हो। अरे, नामर्द ! कायर !! तेरी पत्नी होने में मुझे लाज लगती है। तू कहता है कि वे तुझे बाँदी पुत्र कहते हैं। मैं कहती हूँ तू एक बार नहीं, सौ बार, लाख बार, करोड़ बार बाँदी-पुत्र है। बाँदी-पुत्र ही शरणागत अबला को निराश कर सकता है, प्रकृत क्षत्रिय के प्राण और सर्वस्व तो शरणागत की रक्षा के ही लिये हैं, फिर वह शरणागत चाहे उसके प्राणों का जन्म-शत्रु ही क्यों न हो।"

"बैठो स्वर्ण की चौकी पर, बाँदी, ले आ सोने-चाँदी के थाल, परस दे षट्रस व्यंजन। वह पेटू बाँदी-पुत्र आज भर पेट भोजन करेगा क्योंकि इसके वीर पुत्र की लाश चील-कौवे खाकर पेट भर रहे हैं और इसकी शीलवती कुल-वधू, अपनी

आबरू अपने हाथ में स्वयं तलवार लेकर बचा रही है।

"लाओ, तलवार मुझे दो। मैं देखूँगी कि राजपूत बाला के हाथ की शक्ति सहन करना मुग़ल-तख्त के बस का है या नहीं। (अपना सौभाग्य-सिन्दूर पोंछ कर और सौभाग्य-चूड़ियों को चूर चूर करके) यह लो अपवित्रता को मैंने दूर कर दिया। अब मैं बाँदी-पुत्र की पत्नी नहीं, साक्षात् रण-चण्डी क्षत्रिय बाला हूँ।"

"बस-बस-बस, महारानी बस अधिक नहीं। ईर्ष्या ने मुझे नीच और अन्धा बना दिया था! जब तक मैं वीर अमर की लाश लाकर वीर बाला बहू को प्रतिष्ठा पूर्वक सती नहीं कर दूँगा तब तक न अन्न ग्रहण करूँगा, न जल, न मरूँगा; न छूटूँगा मैं प्रण करता हूँ। हे तेजस्विनी! तुम धन्य हो, तुम बाँदी-पुत्र की पत्नी नहीं, तुम ओजस्विनी क्षत्रिय बाला हो। लाओ मेरी तलवार। महारानी! विदा। अब हम उस लोक में मिलेंगे। यह मैं चला।"

"तब तुम सचमुच ही मेरे स्वामी प्रतीत होते हो। आह! मैं मूर्खा आपे से बाहर होकर क्या कह गई। स्वामिन्! क्षमा करना।

"महारानी! अब समय नहीं है, अब हम उस लोक में मिलेंगे।

"अच्छा मेरे वीर स्वामी ! मैं क्षण भर में ही तुम्हारे चरणों में आने का सब सरञ्जाम किये रखती हूँ, जाओ।"

४

"महारानी, सब कुछ समाप्त होगया!"

"मुझ में यथेष्ट धैर्य है, सब विस्तार से कहो। क्या अमर-सिंह की लाश मिली?"

"उसे, सहस्रों नंगी तलवारों की कठिन मार में घुस कर, मुर्दों की छाती पर पैर रखते हुए, महाराज को, बुर्ज से लाते और दोनों हाथों से तलवार चलाते मैंने स्वयं देखा है।"

"लाश चिता तक सुरक्षित पहुँच तो गई न?"

"महाराज के शयन-कक्ष को ही चिता बनाया गया था, वहाँ बहुत सा ज्वलनशील पदार्थ, घृत आदि जो था, संग्रह करके तय्यार किया गया था।"

"चिता में विधिवत् अग्नि तो दे दी गई न?"

"महाराज तब तक स्थिर खड़े रहे, तलवार उनकी मुट्ठी में कस कर पकड़ी हुई थी।"

"बहू सती हो गई?"

"सती हो जाने पर ही महाराज गिरे।"

"महाराज गिरे? क्या महाराज काम आए?"

"महारानी, महाराज अमर हुए, ऐसा साका किसी ने न देखा होगा।"

"बहुत ठीक, अब तुम कितने बचे हो!"

"अकेला मैं!"

"महाराज का शरीर कहाँ है?

"महाराज के निजू कक्ष में धरा है।"

"क्या शाही सेना यहाँ आ रही है? यह कोलाहल कैसा है?

"महारानी! शाही सेना इधर ही आ रही है!"

अच्छा, एक क्षण ठहरो—जाओ, महाराज के शव को प्राङ्गण में ले आओ। वहाँ चिता तैयार है। यह द्वार पर धूम-धाम क्या है?"

"महारानी शाही सेना भीतर घुसने की चेष्टा कर रही है।"

"यह असम्भव है। अच्छा हम सब चितारोहण करती हैं तुम चिता में अग्नि दो और देखो, भण्डार में सब कुछ प्रस्तुत है, उसमें आग लगा दो, क्षण भर में महल शाही सेना के लिए अगम्य हुआ जाता है।"

"जय वीर माता की!"

पतिव्रत-धर्म

(जोधपुर के यशस्वी महाराज यशवन्तसिंह आलमगीर से युद्ध में परास्त होकर जोधपुर दुर्ग में लौट रहे हैं। रानी वीर पति के स्वागत समारोह का सब सरंजाम किए बैठी है। परन्तु जब वह सुनती है कि राजा विजय करके नहीं-हार कर लौट रहे हैं तो किले का द्वार बन्द कर देती है। और ६ मास तक पति को दुर्ग में नहीं घुसने देती।)

१

(जोधपुर दुर्ग का अन्तःपुर—नेपथ्य में कोलाहल)

राज महिषी—यह कैसा कोलाहल है, क्या सेना आ रही है ? दासी, किसी से कहे, बुर्ज पर जाकर देखे।

(सैनिक का जल्दी से प्रवेश)

सैनिक—(मुजरा करके) महारानी जी को जुहार। श्री-महाराजाधिराज युद्ध-क्षेत्र से वापस पधार रहे हैं।

रानी—(खड़ी होकर) दुर्ग-रक्षक से कहो, महाराज की अभ्यर्थना की तय्यारी करे, अभिवादन की तोपें दागना प्रारम्भ कर दो, दासी, तू मङ्गलाचरण और स्वस्ति उपचार की व्यवस्था कर, और देख आज दुर्ग के परिकोट पर दीपावली होगी। कमला पुत्री, वीरपूजा का आयोजन कर। देखती नहीं, महाराज प्रतापी शत्रु को पद दलित करके लौट रहे हैं। तलवार की पूजा तो तुझे ही करनी है। तेरा थाल तैय्यार है न ? (सैनिक से) ठाकराँ, श्री महाराज अधिक घायल तो नहीं हैं ?

सैनिक—राजमाता की जय हो, श्रीमहाराज के प्रत्येक अङ्ग में अनगिनत घाव हैं।

रानी—आह !अरी !! वनिता, मन्त्री से कह, जल्दी राज-वैद्य अपने उपचारों सहित उपस्थित हों। (सैनिक से) ठाकराँ, सेना की अधिक हानि तो नहीं हुई ?

सैनिक—घणी खम्मा, उङ्गली पर गिने हुए योद्धा बचे हैं, वे सभी सिर से पैर तक घायल हैं।

रानी—विमला, सभी सैनिकों की सुश्रुषा तेरे सुपुर्द है, सावधान बेटी, प्रमाद न करना। (सैनिक से) ठाकराँ, भला महाराज ने कैसा लोहा लिया ?

सैनिक—माता, जैसे केसरी मृगों के झुण्ड में विचरता हो, किसी की सामर्थ्य थी कि श्रीमहाराज की शमशेर के सम्मुख जीवित रहे, परन्तु शत्रु की सेना असंख्य थी, महाराज का दोष नहीं।

रानी—(चमक कर) तुम्हारा वर्णन सन्दिग्ध है, तुम क्या कहना चाहते हो ?

सैनिक—(धरती में घुटने टेक कर) घणी खमा अन्नदाता ! सेवक का अपराध क्षमा हो।

रानी—झटपट निर्भय होकर सब कुछ स्पष्ट कहो।

सैनिक—माता, श्रीमहाराज युद्ध से विमुख होकर लौट रहे हैं।

रानी—(गर्ज कर) क्या कहा विमुख होकर ?

सैनिक—हाँ, महारानी।

रानी—ठाकराँ, क्या तुम पागल तो नहीं.........?

सैनिक—(घुटने बैठ कर) राजमाता, क्षमा हो !

रानी—तब राजा युद्ध में हार कर लौट रहा है ?

सैनिक—शत्रु बहुत प्रबल था। और महाराजा को समय पर सहायता नहीं मिली।

रानी—(क्रुद्ध सर्पिणी की तरह फुफकार मार कर) राजा हार कर लौट रहा है ?

सैनिक—(भयभीत होकर) परन्तु महाराज की वीरता······

रानी—(धरती पर पैर पटक कर) राजा हार कर लौट रहा है ?

सैनिक—(धरती में लोट कर) हाँ माता हाँ,·········

रानी—जीवित ?

सैनिक—हाँ माता हाँ,·········

रानी—और तुम भी ?

सैनिक—(चुप)

रानी—और तुम राजपूत हो ? (हटो सामने से)

२

दासी—महारानी, पूजा का थाल प्रस्तुत है।

" उसे फेंक दो "

" मङ्गलाचार ? "

" बन्द कर दो "

" क्या दीपावली न होगी ? "

" नहीं, ये तोपों की ध्वनि कैसी ? "

" श्रीमती की आज्ञा से महाराज की अभ्यर्थना हो रही है। "

" उन्हें बन्द करदो। "

"जो आज्ञा।"

"महारानी, राज-वैद्य उपस्थित हैं।"

"उनसे कह दो, लौट जायँ, कोई आवश्यकता नहीं है।"

"महारानी की जय हो, दुर्गाध्यक्ष उपस्थित हैं।"

"दुर्गाध्यक्ष, अभी किले के फाटक बन्द किये जायँ।"

"किन्तु महारानी, महाराज दुर्गद्वार पर पहुँच चुके हैं।"

"वे खेत में काम आए।"

"वे चिरायु हैं।"

"वे मर गये हैं।"

"वे पधार रहे हैं।"

"वे महाराज नहीं।"

"वे महाराज हैं।"

"वह कोई भूत अथवा पिशाच है।"

"महारानी, मेरी प्रार्थना......।"

"दुर्गाध्यक्ष मेरी आज्ञा है, किले के फाटक बन्द कर दिये जायँ।"

"क्या महाराज किले में न घुसने पावेंगे?"

"नहीं।"

"सैनिक?"

" एक भी नहीं । "

" जो आज्ञा " (प्रस्थान)

३

" पुत्री, वे तेरे पति हैं, उन्हें क्षमा कर । "

" माता तुम क्यों आईं ? "

" पुत्री, महाराज छः मास से दुर्ग के बाहर घायल पड़े हैं, उन पर दया कर ।"

" वे मेरे पति नहीं ।"

" बेटी, ऐसा न कह ।"

" माता, तुम मेवाड़ की लक्ष्मी हो, तुम्हारी पुत्री का पति कायर है, यह कह कर मेरा अपमान न करो ।"

" बेटी, युद्ध में हार जीत तो होती ही है ।"

" मैं नहीं सह सकती ।"

" उन्होंने शक्ति भर अपना कर्त्तव्य पूर्ण किया ।"

"वहीं खड़े-खड़े कट मरना उनका कर्त्तव्य था ।"

" बेटी, वह फिर जीतेंगे ।"

" कुल की आन तो गई ।"

" वे बदला लेंगे ।"

" राजपूती का तेज नष्ट हो गया ।"

"फिर भी बेटी, तू क्षमा कर, मेरे कहने से।"

"नहीं माता, वे दुर्ग में नहीं आने पावेंगे।"

"वे आरोग्य होते ही युद्ध करेंगे, और बिना विजय किये न फिरेंगे।"

"परन्तु मैं उनका मुँह नहीं देखूँगी।"

"अच्छा, परन्तु दुर्ग का द्वार खोल दे।"

"वे मेरे सम्मुख न आने पावेंगे।"

"न आवेंगे।"

"अच्छा, यह लो दुर्ग की चाभियाँ।"

४

"महारानी, मैं तुम पर गर्व करता हूँ।"

"स्वामिन्! दासी को यथेच्छ दण्ड दीजिये, मैं उपस्थित हूँ।"

"तुम मारवाड़ की प्रतिष्ठा हो।"

"मैंने महाराज का तिरस्कार किया था।"

"तुमने कायरता का तिरस्कार किया था।"

"मैंने इतना घायल होने पर भी आपको छः मास दुर्ग में न घुसने दिया।"

"मेरा अपराध ही ऐसा था। राठौरों के सिंहासन की राजमहिषी को यही उचित था।"

" आप मारवाड़ के स्वामी हैं। "

" वह काम इस पद के योग्य न था। "

" महाराज को कितना कष्ट हुआ—वह भी अपनी पत्नी के द्वारा। "

" महारानी, यही तुम्हारा पातिव्रत धर्म है, पति की अन्ध दासता नहीं। तुम्हारी जैसी पतिव्रता जब देश में हों तो क्या कोई भी पुरुष कायर हो सकता है ? "

" तब स्वामी, क्या आपने दासी को क्षमा किया ?"

" महारानी ! मैं स्वयं तुम्हारे हाथ बिका हूँ। "

" तब इस विजय के उपलक्ष में रास-रंग की आज्ञा दें। "

" प्रिये, यथेच्छ रास-रङ्ग करो, तुम्हारे पति ने शत्रु के ऐसे दाँत खट्टे किये हैं कि वह सदा याद रखेगा। "

अस्मत पर हाथ

(बूँदी के राजमहल में नाच रंग के दौर दौरे थे। छोटी राजकुमारी का विवाह था। डाडिनें गा रहीं थीं। भाट विरद वर्णन कर रहे थे। बाँके राजपूत अपनी बाँकी अदा दिखा रहे थे। चारों ओर रास रंग हो रहे थे।)

१

दूल्हा एक उठती आयु के अल्हड़ युवक थे। वे मसनद के सहारे पड़े समवयस्कों के साथ मद्य की प्यालियाँ खाली करते हुए गप्पें उड़ा रहे थे।

"कहो, भई, बूँदी में सबसे अधिक सुन्दरी स्त्री कौन है?"

"वाह, क्या आप यह भी नहीं जानते? आप की सब से

बड़ी साली साहेबा के समान सुन्दरी स्त्री तो बूँदी क्या राज-पूताने भर में नहीं है।"

"क्या सच ?,,

"हाथ कंगन को आरसी क्या ? कुमार अपनी आँखों से देख लें। अब तो आप नातेदार हो गए।"

"और नाता भी ऐसा कि दो बात उल्टी सीधी भी हो जायें तो निभाव हो जाय।"

"तब आज अब उस रूप की झाँकी की जायगी।"

"और पूजा अराधना भी।"

२

(बूँदी का अन्तःपुर)

बींद राजा कारचोबी की मसनद पर आ बैठे। एक बाँदी ने ऊपर चँदोवा तान दिया, दूसरी ने मद्य का प्याला भर दिया, तीसरी ने पान की गिलोरियाँ पेश कीं, चौथी ने आगे बढ़ कर मुजरा किया और निवेदन किया—

"आज्ञा पाऊँ तो कुछ गाना बजाना हो।"

"परन्तु किसकी आज्ञा से ?"

"सरकार हम बाँदियाँ आप ही की आज्ञा के आधीन हैं।

"परन्तु किसकी आज्ञा से ?"

"अन्नदाता, बड़ी बाईराज की आज्ञा से।"

"तो वे पर्दे में छिपकर ही आज्ञा देती हैं।"

"अन्नदाता, छिपकर क्यों, वे बींदराजा के व्यालू की तैयारी में हैं।"

"वे एक बार दर्शन देने की तो कृपा करें।"

"मैं निवेदन करती हूँ, पृथ्वीनाथ।"

३

(वही स्थान)

(राजकुमारी हँसती हुई आती है)

"बींद राजा का क्या हुक्म है ?"

"मुजरा, हुक्म देने वाले तो यहाँ हाज़िर नहीं हैं, आज्ञा पाऊँ तो जैसलमेर सांडनी सवार भेज दिया जाय।"

"इतना कष्ट क्यों, उनका हुकम लेकर तो यहाँ आई ही हूँ, आज आपका ही हुक्म बजा लाया जाय।"

"इस कृपा का कारण ?"

"आप बींद राजा हैं, हमारे मान हैं, मिहमान हैं, आपका हुक्म तो महाराज को भी बजा लाना होगा, परन्तु आप बैठिए, मैं कलेवा लाती हूँ"

"आप क्यों ? आप यहाँ विराजिए ?"

(हाथ पकड़ लेता है पर तुरन्त एक प्रबल धक्का खाकर भूमि में जा गिरता है)

"कायर, पापिष्ठ, अधम।"

(कुमारी वस्त्रों से कटार निकाल खट से कलाई काट डालती है। दास दासी हक्का बक्का खड़े रह जाते हैं। महल के छोटे बड़े सब वहाँ इकट्ठे हो जाते हैं। महाराज और महारानी भी आते हैं)

"बेटी, यह क्या किया?"

"इस पापिष्ठ ने मुझे छू लिया।"

"बेटी यह नाता ही ऐसा है।"

"पिताजी, चुप रहो।"

(महाराज नीची गर्दन कर लेते हैं, कुमारी मूर्च्छित होकर धरती में गिर जाती है)

"वीरेन्द्र!"

"अन्नदाता, महारानी।"

"अभी जैसलमेर को साँडनी रवाना कर दो। वह बिना मंजिल लिए जाय और महाराज से सब हकीकत बयान कर दे। और हमारे कूच की भी तत्काल तैयारी कर दो।"

"जो महारानी की आज्ञा।"

(बूँदी भर के छोटे-बड़े राजवर्गी इकट्ठे हो जाते हैं। सभी कुमारी को समझाते हैं पर कुमारी हठ नहीं छोड़ती। उसके मुख पर शब्द हैं-अस्मत ! अस्मत ! होठ मानो आप ही फड़क रहे हैं और उनमें से 'अस्मत' की ध्वनि फूटी पड़ती है।)

+ + +

सब समझ जाते हैं कि खैर नहीं। सारा रस रङ्ग फीका पड़ जाता है। सबके चहरों पर हवाइयाँ उड़ने लगती हैं। महाराज वर-पक्ष से कहला भेजते हैं कि लड़की का डोला तैयार है, उत्तम यही है कि झटपट विदा हो जाइये। यदि जैसलमेर की सेना आ गई, तो एक भी मर्द बच्चा जीवित न बचेगा ?

रो-रोकर दुलहिन बिदा होती है। इसके भाग्य में कै घड़ी का सुहाग है ? कौन जाने ? राजमहल में कुहराम मच र । है दुलहिन की पालकी को बीच में डाले वर-पक्ष की सेना सर्प की भाँति दुर्ग से बाहर जा रही है।

+ + + +

(दो ही मंजिल के बाद गर्द उड़ती देख वर-पक्ष ने समझ लिया कि काल मण्डराता हुआ आ रहा है। इधर सेना बहुत कम थी। पर जितने भी थे, वे मोर्चेबन्दी करके तलवारें सूँत-कर मरने को खड़े हो गए !)

५

"इस सेना का मुखिया कौन है ? "

" यह सेना नहीं बारात है । "

" इस बारात में हमारा अपराधी है, उसे हमारे सुपुर्द किया जाय । "

"वह कौन है ? "

"वींदराज । "

" उन्हें हम प्राण रहते सुपुर्द नहीं कर सकते ।"

"तो तुम्हारे प्राण नहीं रहने पावेंगे । "

" हमें इसकी चिन्ता नहीं । पर बारात पर अकस्मात् यों चढ़ दौड़ना वीरता नहीं । "

" यहाँ वीरता का प्रश्न नहीं, यहाँ शत्रु से युद्ध नहीं, यहाँ अपराधी को दण्ड देना है । "

"उसका अपराध क्या है ? "

"उसने स्त्री की अस्मत पर हाथ डाला है । "

"वह साधारण दोष था । "

"उसका दण्ड मृत्यु है । "

"यह साधारण काम नहीं । "

"यदि सारे राजपूताने की तलवारें भी आकर उसकी रक्षा करना चाहें तो बचा नहीं सकेंगी । "

(बाँके वीर टूट पड़ते हैं खटाखट तलवारें चलती हैं और देखते ही देखते खून की नदी बह निकलती है। जैसलमेर की सेना विजयी होती है। जैसलमेर का राजा लाशों में से दूल्हा की लाश निकाल कर उच्च स्वर से कहता है प्रिये! अपराधी को दण्ड मिल गया।

"स्वामिन्! अब एक और कर्त्तव्य शेष रह गया है।"

(ज्येष्ठा राजकुमारी डोले में से निकल कर लाशों को पैरों से रौंदती हुई, दुलहिन के डोले के पास पहुँचती है। देखती है दुलहिन की आँखों में आँसू नहीं हैं। उसने अपने हाथ से माथे का सिन्दूर पोंछ लिया है और अपनी सुहाग की चूड़ियाँ चूर-चूर कर डाली हैं। बहिन को देखते ही वह सहसा हँस पड़ती है और कहती है—"जीजाजी कहाँ हैं?"

वह क्रुद्ध वीर जो अब तक बाघ की भाँति तलवार लिए फिरता था, चुप चाप विनयपूर्वक आ खड़ा होता है। विनम्र स्वर से कहता है—बाई जी को मुजरा है। "जीजाजी! जीजी के मन का तो तुम कर चुके, अब कुछ मेरा भी उपकार कर दो।"

"जो आज्ञा बाई जी राज।"

"क्या मेरे ससुराल वालों में कोई जीवित बचा है?

"एक भी नहीं।"

'तब' तुम ही चिता चुन दो, पति की लाश को स्नान करा, चन्दन चर्चित कर चिता पर रख दो, जीजी आग दे देंगी। मैं

अब सती होऊँगी। जीजा जी, यह कष्ट तो अब आपको ही करना होगा।"

(वीर राजपूत की आँखों में एक बूँद आँसू आकर ढलक जाता है। वह वीर बाला को सैनिक सलाम करके पीछे हट जाता है।

× × × ×

(सूर्य छिप रहा है, चिता बड़ी-बड़ी लपटों को उड़ा कर धक-धक जल रही है, बड़ी-बड़ी लकड़ियों के लाल-लाल अङ्गारे हँस—हँस कर उस खेल को देख रहे हैं) !!

दुर्गाधिकारिणी

ओरछा के वीर महाराज चम्पतराय युद्ध में घायल होकर दुर्ग में पड़े थे उसी समय दुर्ग भंग हो गया। रानी घायल महाराज को केवल बीस योद्धाओं के साथ लेकर दुर्ग में से निकल पड़ी। परन्तु शत्रुओं ने उनका पीछा किया। जब प्रत्येक वीर वीरगति को प्राप्त हो चुका—तब वीर रानी ने पति की छाती में कटार मार स्वँय भी प्राण त्याग दिये। और इस प्रकार जीवित पति को शत्रु का बन्दी होने के अपमान से रक्षा की।

१

"यह कोलाहल कैसा है, महारानी ?"

"महाराज, दुर्ग भंग होना चाहता है"

"क्या प्राचीर के भीतर शत्रु आ चुके ?"

"हाँ महाराज !"

"हमारी सेना कितनी अवशिष्ट है ?"

"केवल सौ वीर शेष बचे हैं"

"सेनापति को बुलाओ"

"सेनापति काम आए"

"इस समय दुर्गाध्यक्ष कौन है ?"

"मैं"

"ओह, कोलाहल बढ़ रहा है"

(एक सैनिक का प्रवेश)

"महाराज की जय हो—द्वार भग्न हो गया—शत्रु इधर ही आ रहे हैं।"

"महारानी, मुझे सहारा देकर उठाओ। मैं युद्ध करूँगा।"

"महाराज, आप के शरीर पर असंख्य घाव हैं, राज-वैद्य की आज्ञा नहीं।"

"राज-वैद्य को अभी बुलाया जाय।"

(राज-वैद्य उपस्थित होते हैं)

"राज-वैद्य, मैं अभी युद्ध के लिये सज्जित होना चाहता हूँ।"

"महाराज यह असम्भव है।"

"नहीं, इसे सम्भव करो।"

"महाराज, आपके शरीर पर अस्सी घाव हैं, जिनमें आठ मर्मान्तक हैं।"

"खेद है, तब क्या मुझे शत्रु का बन्दी होना पड़ेगा? महारानी!"

"महाराज!"

"क्या मैं बन्दी हूँगा?"

"महाराज यह असम्भव है।"

(सेवक—प्रवेश करके)

"जय राजमाता की–पालकी और सेना प्रस्तुत हैं।"

"अच्छा, कुल सैनिक कितने शेष हैं?

"केवल सत्तर"

"बहुत अच्छा, पचास सैनिक दुर्ग की रक्षा करें, और शेष बीस हमारे साथ चलें। महाराज! आप पालकी में सवार हूजिए।"

"यह क्या महारानी, क्या प्राण रहते मैं पलायन करूँगा?'

"महाराज, पतङ्ग की भाँति मरने से क्या लाभ? वीरों की भाँति मरने का भी समय आएगा।"

"महारानी, मैं भागूँगा नहीं, तुम पालकी में बैठ कर चली जाओ।"

"महाराज, क्या इसी अशक्त और घायल अवस्था में बन्दी होंगे ?"

"हाय, महारानी, इस अपमान से बचने का कोई उपाय नहीं ?"

"महाराज, आप पालकी में सवार हों विलम्ब का समय नहीं।"

"परन्तु........."

"महाराज, मैं दुर्ग-रक्षक के पद पर हूँ, मेरा पद वापस लीजिए।"

"नहीं महारानी !"

"तब मेरी आज्ञा मानिए"

"एक शर्त पर दुर्ग स्वामिनी !"

"वह क्या ?"

"मैं जीवित बन्दी न होने पाऊँ"

"महाराज को बन्दी करने की सामर्थ्य किसी में नहीं। उठिए।" रामरक्षा !

"महारानी !"

"महाराज को पालकी में लिटाओ । मेरा घोड़ा लाओ, बीस सैनिकों का मैं सञ्चालन करूँगी, शीघ्रता करो, शत्रु आ चुके ।"

"जो आज्ञा, गुप्तद्वार सुरक्षित है"

"तब चलो "

२

राह में)

"महारानी, प्रतीत होता है, शत्रु पीछा कर रहे हैं, घोड़ों की टाप सुनाई दे रही है ?

"महाराज निश्चिन्त रहें—शत्रु आपका चरण छू नहीं सकेंगे ।"

"महारानी, वह शत्रुओं की हुँकार सुनो "

"सुनती हूँ । रामरक्ष ?"

"महारानी !"

"दस वीर यहीं रुक कर शत्रु दल का सामना करेंगे, शेष दस वीर पालकी के साथ बढ़ेंगे । पालकी के साथ मैं जाऊँगी । शेष दस वीरों के नायक तुम हो ।"

"जो आज्ञा स्वामिनी "(दस वीर रह जाते हैं, पालकी आगे बढ़ती है)

शत्रु फिर आ रहे हैं, उनकी हुंकार सुनाई दे रही है।"

"सैनिको ? पालकी तेज़ करो ।"

"महारानी ! क्या मैं बन्दी हो जाऊँगा ?,,

"कभी नहीं महाराज ।,,

"केवल दस रक्षक शेष हैं !!,,

"और मैं भी उपस्थित हूँ महाराज, धीरज से लेटे रहिए।

"नहीं, महारानी, मेरी तलवार लाओ—मैं युद्ध करूँगा।

(उठता है)

"ओह, स्वामिन्, पेट के सब टाँके टूट गए-घाव बह गए, आप लेटे रहिए। वीर सिंह !,,

"महारानी !

"शत्रु आ पहुँचे—सावधान !

"जो आज्ञा !

"तुम छः वीरों को यहीं लेकर शत्रु को रोको, शेष चार पालकी के साथ चलेंगे। वाहकों ! क्या अधिक तेज़ नहीं चल सकते ?

"महारानी, हम प्रण पर खेलकर भाग रहे हैं, मार्ग खराब और रात अंधेरी है।

"महाराज ?"

"महारानी !"

"अब आगे पालकी बढ़ाना असम्भव है।"

"तब क्या मैं बन्दी हूँगा ? नहीं महारानी, यह नहीं होगा।"

"नहीं स्वामी आप बन्दी न होंगे।"

"तब"

"मैं आप के मान पद–गौरव की रक्षिका हूँ।"

"जयसिंह, पालकी रोक लो और लौटकर खड़े हो जाओ !"

"जो आज्ञा महारानी !"

"तलवारें सूत लो !"

"महारानी की जय हो !"

"दो–दो आदमी आगे बढ़ें।"

"जो आज्ञा महारानी।"

"महारानी !"

"महाराज !"

"अब कितने योद्धा बचे हैं ?"

"केवल दो, तीसरी मैं !"

"आह, मेरे सम्मान की रक्षा कैसे होगी ?"

"महाराज उद्विग्न न हों।" (कटार निकालती है)

"स्वामी, क्या प्रतिष्ठा प्राणों से बढ़ कर नहीं ?"

"सब से बढ़ कर प्रिये !"

"महाराज ! प्राणनाथ !! मैं उसकी रक्षा के लिए कठोर कर्म करूँगी, मैं क्षत्रिय महिला हूँ।"

"महारानी, मेरी प्रतिष्ठा भङ्ग न हो।"

"महाराज, अन्तिम वीर गिरा। (आगे बढ़कर) स्वामी, मैं क्षण भर ठहर कर आऊँगी, दासी के स्नेह से परिपूर्ण अपना वक्ष स्थल सीधा कीजिए।"

(राजा की छाती में कटार घुसेड़ देती है)

"शत्रुओ ! तुम महाराज को बन्दी नहीं कर सकते।

"महारानी को आदाब, क्या आपने अपने हाथ से महाराज को मार डाला।"

"हाँ, महाराज की प्रतिष्ठा की रक्षा के लिये, अब मेरा अन्तिम कर्म देखो। तुम में कोई एक वीर मुझ से युद्ध करने को प्रस्तुत है ?"

"नहीं महारानी, आप से हमें कुछ दुश्मनी नहीं।"

"तुम्हारे साथ कोई ब्राह्मण है ?"

"नहीं।"

"हिन्दू है ?"

"नहीं।"

"तुम में मनुष्यत्व है ?"

"महारानी, लड़ाई लड़ाई है मगर आप हुक्म दीजिए।"

"महाराज का और मेरा शरीर कोई शत्रु न छुए, हमारी

अन्त्येष्टि कोई ब्राह्मण करे। देखते हो—मेरे सब वीर स्वर्ग जा चुके।"

"महारानी का हुक्म बजा लाया जायगा।"

"धन्यवाद! शत्रु-श्रेष्ठ।"

(वही कटार सीने में मारकर महाराज की लोथ पर जा गिरती है।)

विधवा सिंहनी

(कुटिल औरंगजेब के कौशल से वीरवर जोधपुर महाराज जसवन्तसिंह का जमरूद के किले में स्वर्गवास हो गया। वहाँ से उनकी गर्भवती रानी को लेकर दुर्गादास और सरदार जोधपुर की ओर चले। राह में लाहौर पहुँचते २ रानी ने पुत्र प्रसव किया। वहीं आलममगीर ने परवाना भेज कर सबको एक प्रकार से नजरबन्द करके दिल्ली बुला भेजा। और इस असहाय रानी की छोटी सी राजपूत टुकड़ी को घेर कर कुँवर को छीनने का उद्योग किया। परन्तु रानी अपने सरदारों की सहायता से साहस करके पुत्र सहित भाग निकली)

"तैयार हो जाओ ठाकराँ ।"

दुर्गादास घोड़े से कूद पड़े। वे पसीने से तर हो रहे थे और उनका घोड़ा फेन उगल रहा था।

मुकुन्द दास खीची ने आगे बढ़ और तलवार खींच कर कहा—"किस लिए दुर्गादास ?"

"कुमार और महारानी की रक्षा के लिए।"

"तो बादशाह ने अस्वीकार किया ? विस्तार से कहो, क्या हुआ ?"

"विस्तार से कहने का समय नहीं है। मुग़ल-सेना अभी इस महल को घेरने आ रही है, महारानी और राजकुमार को बचाना होगा। (पुकार कर) ठाकराँ, महारानी और शिशु कुमार के लिये कौन प्राण देगा !"

दो सौ तलवारें झनझना उठीं। बिजली की चमक की भाँति वे लपलपाने लगीं। वज्र-गर्जन की भाँति दो सौ राजपूत चिल्ला उठे-हम प्राण देंगे, महारानी की जय ! महाराज कुमार की जय !"

(महारानी का प्रवेश)

"दुर्गादास, क्या जो सोचा था वही हुआ ?"

"हाँ माता !"

"तब जसवन्तसिंह की रानी के लिये कोई भय न करो ! उसकी बाहुओं में आत्म-रक्षा के योग्य यथेष्ट बल है। पर जोधपुर राजवंश के एक मात्र अधिकारी को बचाओ।"

"महारानी हम दो सौ हैं, प्रत्येक ने प्राण देने की ठान ली है।"

"परन्तु प्राण देने का यथेष्ट समय है, प्रथम कुमार की रक्षा होनी चाहिये।"

"माता, अभी सब ठीक हुआ जाता है। मुकुन्द दास तुम झट, पट कालबेलिया (सपेरा) बन जाओ। तुम्हें स्मरण है, एक बार तुमने हास्य में यह स्वाँग महाराज को दिखाया था। आज तुम्हें फिर कन्धे पर साँपों की पिटारी लटकानी होगी। पिटारी में रहेंगे राजकुमार; समझे ! एक क्षण भी विलम्ब का अवसर नहीं है।"

"मैं कुछ ही क्षणों में आता हूँ।"

"महारानी, कुँवर को ले आइये।"

"दुर्गादास, यही एक मेरी आँखों का तारा है।"

"माता यह मारवाड़ का एक मात्र धनी है।"

"देखो, कुछ भय तो नहीं ?"

"महारानी आप चिन्ता न करें। लीजिये ये मुकन्ददास आ

रहे हैं। भाई बीन बजाने में बिल्कुल सुध न भूल जाना, नहीं तो मुँह पर कालिख लग जायगी।

"दुर्गादास, जल्दी कुमार को लाकर पिटारी में लिटा दो सेना आ रही है—वह गर्द और शोर सुनते हो ?"

"सुनता हूँ। महारानी ! एक क्षण भी समय नष्ट न कीजिए, कुमार को लाइये।"

(रानी जाकर कुमार को लाती हैं)

"यह लो दुर्गादास, कुमार तुम्हारे सुपुर्द है।"

"मुकुन्द दास, वह दूर मन्दिर का कलश दीख रहा है, कुमार को वहीं पहुँचाना होगा।"

"तदनन्तर ?"

"पुजारी महाराज को कुमार सौंप देना।"

"फिर ?"

"शेष कार्य स्वयं वे कर लेंगे।"

"ठाकराँ, जल्दी कुमार को छिपा दो।"

"यह लो मुकुन्द दास, सावधान, क्या तुम्हारे पास शस्त्र हैं ?"

"यथेष्ट हैं, परन्तु इस बीन के लहरे के सामने उसकी आवश्यकता न पड़ेगी। परन्तु दुर्गादास भाई !......"

"मुकुन्द दास ! रोते हो ? छीः !!

"अब न मिलेंगे।

"भाई हम राजपूत हैं। बढ़ बढ़ कर मरते हैं और बढ़-बढ़ कर जीते हैं।"

"ठाकराँ, सबको मुजरा। माता! ईश्वर आपकी रक्षा करे।"

"मुकुन्द दास, मुझे अभी मरने की फ़ुर्सत नहीं है, मैं तुम्हें मिलूँगी।"

"महारानी, आपकी जय हो।"

"मुकुन्द दास, कोलाहल बहुत बढ़ रहा है, तुम इसी तरह झूमते झामते लहरा बजाते चले जाओ।"

"ठहरो मुकुन्द दास!"

"जो आज्ञा महारानी!"

"सुनो, यदि तुम पकड़े जाओ, तो कुँवर के कलेजे में छुरी भोंक देना। खबरदार, औरङ्गजेब के पास कुँवर को कोई जीते जी न ले जा सके।"

"माता, ईश्वर कुँवर साहेब को चिरंजीव रक्खे।"

२

(रानी का आवास)

"लो वह सेना आ गई।"

"अनगिनत सेना है।"

"स्वयं दिलेर खाँ सेनापति साथ में हैं।"

"दुर्गादास ?"

"महारानी !"

"स्त्रियों का क्या होगा ?"

"वे गोलियाँ दागने लगे।"

"द्वार तोड़ रहे हैं।"

"दुर्गादास !"

"महारानी !"

"स्त्रियों का प्रबन्ध करो, शत्रु द्वार तोड़ रहे हैं।

"माता, अब कुछ प्रबन्ध न हो सकेगा, समय नहीं है।"

"तब मैं सबका प्रबन्ध करूँगी. बहिनो और बेटियो !"

"महारानी !"

"तुम तैयार हो जाओ, तुम्हें जौहर-व्रत करना पड़ेगा।"

"हम तैयार हैं !"

"बहिनो, यह कड़ी व्यवस्था करनी ही पड़ी।"

"महारानी, यह हमारे लिये नई बात नहीं, हम क्षत्राणियाँ हैं !"

"सब उस कमरे में चली जाओ, उसमें बारूद भरी है उस में तुम लोगों के खड़ी रहने भर की जगह है, उसके बाद···!"

"महारानी हम स्वयं आग लगा लेंगी, महारानी की जय हो।"

"मृत्यु हमारी जय है, जाओ बहिनों, मैं तुम्हारे साथ न जा सकूँगी। मैं मुग़ल तख्त को भस्म करूँगी। जाओ, मरने की अभी मुझे फ़ुर्सत नहीं है।"

"जय माता! जय मारवाड़ की अधीश्वरी!"

३

(वही स्थान)

"दुर्गादास!"

"माता!"

"अब विलम्ब क्यों?"

"हम तैयार हैं!"

"हम कुल कितने हैं?"

"दो सौ तीन सब।"

"बहुत ठीक। ठहरो, बच्ची को कस कर मेरी पीठ पर बांध दो।"

"जो आज्ञा।"

"तुम अन्त तक दाहिने भाग में रहना।"

"जो आज्ञा।"

"हम निकले चले जावेंगे, रुकेंगे नहीं।

"बहुत अच्छा"

"यदि मैं पकड़ी जाऊँ तो तुम अपना भाला मेरी कोख में पार कर देना।"

"जो आज्ञा।"

"मेरी बच्ची जीती न पकड़ी जाय, ध्यान रहे।"

"जो आज्ञा।"

"ठाकराँ!"

"जय महारानी! जय राजमाता!!"

"आज हमारा साखा है।"

"माता, हमारी तलवारें आज तृप्त होंगी।"

"लो द्वार टूट गया।"

"आह! बारूद में भी आग लग गई, कैसा भयानक धड़ाका हुआ, सब समाप्त हुआ।"

"अरे! कितना धुँआ-अन्धकार-शोर-गुल शत्रु आगए।"

"मारो—मारो"

"हाय—हाय!"

"दुर्गादास!"

"माता!"

"यही समय है!"

"बढ़ो!"

"चलो माता!"

"सावधान दुर्गादास ?"

"मैं आपके दाहिने भाग पर हूँ।"

"मारो।"

"मारो।"

"मारो-मारो।"

"ठाकराँ!"

"जय माता की! जय रण-चण्डी की!!"

"बढ़े चलो।"

"बढ़े चलो।"

"मारो।"

"काटो।"

"पकड़ो।"

"हाय-हाय"

"तोबा!"

"या खुदा!"

(बादशाह का दर्बारे खास)

"क्या रानी निकल गई?"

"जहाँपनाह!"

"सिर्फ़ दो सौ आदमियों के साथ?"

"जी हाँ खुदाबन्द!"

"और पाँच हज़ार शाही फ़ौज के घेरे से ?"

"जी हाँ बन्दानवाज़ ?"

"और तुम वहाँ खुद मौजूद थे !"

"जी हाँ जहाँपनाह ! !!"

"लड़ाई हुई ?"

"हुजूर, शाही फ़ौज में पाँच सौ आदमी बचे हैं ।"

"और राजपूतों में ?"

"शायद पाँच । छः कोस तक पीछा किया गया ।"

"आखिर वह बच निकली ?"

"हुजूर वह देखने के काबिल जौहर था । वह मदानी रानी बाल खुले, बच्चा पीठ पर बंधा, घोड़े की रास मुँह में थामे दोनों हाथों से तलवार चलाती, शाही फ़ौज को काई की भाँति फाड़ती चली गई । एक—एक हाथ तुला पड़ता था । एक-एक राजपूत काल बना, था ।"

"और शाही फ़ौज भेड़-बकरियों का गिरोह था ?"

"जहाँपनाह, भूकम्प से जैसे बालू का ढूँढ ढह पड़ता है, इस प्रकार शाही फ़ौज उसके जलाल से छिन्न-भिन्न हो गई ।"

"जाओ तुफ़ है तुम्हारी बहादुरी को ।"

५

(उदयपुर का राजप्रासाद)

"महाराना, मैं आपके आश्रित होकर आई हूँ। जोधपुर के उत्तराधिकारी की आपको रक्षा करनी होगी।"

"बहिन, मैं प्राण देकर भी कुमार की रक्षा करूँगा।"

"महाराना की जय हो, आप हिन्दुपति हैं। आपकी सगी बहिन की जब यह दुर्दशा हुई है, तो न जाने कितनी राजपूत बच्चियाँ दुर्दशा में पड़ी होंगी। महाराना, यह बादशाहत जड़ से उखाड़नी होगी।"

"बहिन, इसके लिए रक्त का समुद्र भरा जायगा।"

"महाराना, मैं अत्याचार का बदला लूँगी, इसीलिए मैं उस दिन जलकर मरी नहीं। मेरे पास यही सम्पत्ति उस लुटेरे बादशाह के हाथ से बची—यह पुत्र और वह पुत्री, पुत्री राह में मर गई। अब मेरी एक मात्र सम्पत्ति यह दूध-पीता बच्चा है।"

"इसके लिए निश्चिन्त रहो, और यहाँ निर्भय कुँवर के साथ रहो।"

"नहीं भाई, मैं रह नहीं सकती, मैं मारवाड़ जाऊँगी।"

"किन्तु वहाँ रहना खतरे से खाली नहीं।"

"महाराना, मैं भूकम्प में जन्मी, तूफ़ान में मेरा घर है, प्रलय के बादलों में मेरी सेज है, विपत्ति मेरी सखी है, मैं क्षत्राणी हूँ या हँसी ठट्ठा। मैं मारवाड़ जाऊँगी आग सुलगाऊँगी और मुग़लों के तख्त को खाक करूँगी। राजकुमार आपके आश्रित हैं। चलो दुर्गादास!"

"जो आज्ञा माता!"

क्षत्रिय पुत्री

(मेवाड़ के सूंलावत सरदार सेनापति गोविन्दसिंह की कन्या कल्याणी का विवाह मेवाड़ के शूरवीर सांवत पुत्र से हुआ था। वह सावंत पुत्र मुसलमान हो कर मुग़ल सेना का प्रधान सेनापति हो गया। उसका नाम महावतखाँ था। वह सम्राट् जहांगीर का प्रतापी सेनापति था। यहाँ कल्याणी के धर्मद्वन्द का एक रेखा चित्र है)

१

"कल्याणी ?"

"पिता जी ?"

"तुम आज से विधवा हुई बेटी।"

"नहीं पिता जी, मैं सधवा हूँ।"

"सुना तुमने वह अधम राजपूत-कुल-कलंक मुसलमान हो गया है।"

"फिर भी वह मेरे पति हैं।"

"मेवाड़ के सेनापति की कन्या का पति मुसलमान नहीं ह सकता।"

"पिता जी, धर्म और आचार की शाखाओं में जाना मेरा काम नहीं, मैं केवल इतना जानती हूँ, कि इन्हीं के साथ पवित्र अग्नि, की साक्षी देकर मेरा विवाह हुआ था। उस दिन हम अग्नि, गुरुजन, ईश्वर और देवताओं की साक्षी में एक हुए थे। अब भला शरीर के रहते और नष्ट होने पर भी, उसका कौन विच्छेद कर सकता है?"

"क्या तुम मुसलमान की पत्नी बनना स्वीकार करती हो?"

"मैं पति की धर्म पत्नी हूँ।"

"क्या तुमने कुछ और नहीं सुना?"

"क्या?"

"वह कुलाङ्गार अकबर की पचास हज़ार सेना का सेनापति होकर मेवाड़ को विध्वंस करने आया है।"

"सुन चुकी हूँ।"

"और तब भी तुम उसकी पत्नी हो ?"

"हाँ, पिताजी, स्त्री का पत्नीत्व स्वार्थ कामना से रहित, पर्वत के समान दृढ़, ध्रुव के समान निश्चल है, वह आँधियों से नहीं काँपता, भूचालों से विचलित नहीं होता।"

"कल्याणी, तुम मेरी कन्या हो।"

"हाँ पिताजी!"

"मेरे गौरव को नष्ट करने वाली!"

"आपके गौरव को उज्ज्वल करने वाली!"

"मुसलमान की पत्नी होकर!"

"पति की पत्नी होकर।

"ऐसे नीच, घृणित, अधम, देश-द्रोही, विधर्मी......"

"पिता जी, स्त्री के सम्मुख उसके पति की निन्दा अनुचित है।"

"कल्याणी!"

"पिताजी,!"

'-क्या तुम्हारा यही निश्चय है!"

"हाँ, पिताजी!"

"तब तुम मेरी पुत्री नहीं, मेरे घर में तुम्हारा स्थान भी नहीं तुम अभी जाओ, यवन की स्त्री का मेवाड़ के सेनापति

के घर में काम नहीं, जाओ तुम्हारा धर्म पति है तो मेरा धर्म देश है।"

"जो आज्ञा पिताजी, प्रणाम !"

२

"भैया अजय! तुम क्यों दुखिया बहिन के साथ लगे! मैं अपना मार्ग देख लूँगी, तुम जाओ, तुम्हारे देश को आवश्यकता है, तुम वीर हो, इस समय शत्रुओं ने मातृभूमि को घेर रक्खा है, तुम सेना में लौट जाओ।"

"कल्याणी, मैं प्रथम तुम्हें शत्रु-शिविर में सुरक्षित छोड़ आऊँ।"

"शत्रु-शिविर में क्यों ?"

"तुम्हारे पति के पास !"

"वहाँ मैं नहीं जाने की।"

"तब कहाँ जाओगी ?"

"जहाँ मेरी आवश्यकता होगी।"

"क्या तुम स्वामी के पास जाना नहीं चाहतीं ?"

"नहीं !"

"क्यों ?"

"क्योंकि वह विधर्मी और देशद्रोही है।"

"फिर पिता जी से विवाद क्यों किया ?"

"पिता जी का विचार भ्रान्त था।"

"क्या तुम पति को प्रेम नहीं करती ?"

"प्राणों से अधिक।"

"और प्रतिष्ठा ?"

"भगवान् से अधिक।"

"तब वहाँ जाती क्यों नहीं ?"

"मैंने उन्हें त्याग दिया !"

"क्यों ?"

"वे देश और धर्म के शत्रु हैं !"

"फिर क्या करोगी ?"

"उनको दण्ड दूँगी !"

"तुम ?"

"हाँ, मैं।"

"तुम्हारा साहस !! पचास हज़ार यवन-सेना के अधिपति को तुम दण्ड दोगी ?"

"मैं ही इसकी योग्य अधिकारिणी हूँ।"

"और तुम उसे प्रेम और आदर भी करती हो ?"

"हाँ"

"अद्भुत है ?"

"नारी-हृदय और नारी-कर्त्तव्य सदा ही अद्भुत है।"

"कल्याणी ! बहिन !!"

"भाई अजय !"

"मैं जीते जी तुम्हारे साथ हूँ, हमारा-तुम्हारा ध्येय एक है ।"

"क्या तुम भी उन्हें प्यार करते हो ?"

"मैंने सदा उन्हें प्राणों से अधिक प्यार किया ।"

"और आदर ?"

"पिता के समान ।"

"तब भाई आओ, इस देश और धर्म के शत्रु को दण्ड दें ।"

३

"क्या तुम उदयपुर गए थे ?"

"जी हाँ जनाब ।"

"सेनापति से मुलाकात हुई ?"

"जी हाँ जनाब ।"

"ख़त दिया ?"

"जी हाँ जनाब ।"

"जवाब लाओ, कहाँ है ?"

"जवाब ज़बानी दिया है, ख़त नहीं दिया ।"

"ज़बानी जवाब ? वह क्या जवाब है ?"

"वह हुज़ूर के सामने कहने योग्य नहीं।"

"हरूफ़-हरूफ़ सुना दो।"

"हुज़ूर........"

"एक-एक लफ़्ज़ फ़ौरन बयान करो।"

"ख़त को पढ़कर गुस्से से लाल हो गए।"

"फिर ?"

"ख़त फाड़कर पैरों से कुचल दिया।

"और ?"

"कहा—मेवाड़ के सेनापति की लड़की विधर्मी और देश-द्रोही को नहीं दी जा सकती, वह विधवा हो गई।"

"और ?"

"यह भी कहा, यह तलवार बहुत जल्द उस मुग़लों के गुलाम के टुकड़े करेगी।"

"और ?"

"और यह कि, उस नीच कुमार्गी से कह दो कि उदयसागर में डूब मरे।"

"तुमने कुछ ज़बानी कहा ?"

"बहुत मिन्नतें कीं।"

"तब ?"

"गर्दनियाँ देकर निकलवा दिया।"

"और कुछ देखा ?"

"सुना, लड़की को घर से निकाल दिया है !"

"निकाल दिया है ?"

"जी हाँ जनाब, और वह बिना खाना-पीना खाए-पीए जनाब को ढूँढ़ती, गाँव-गाँव पैदल भटक रही है ।"

"क्या यह सच है ?"

"गुलाम ने आँखों से देखा है, फटे कपड़े, थकावट से चूर चूर जिस्म ।"

"तुमने कुछ कहा ?"

"मैंने बहुत मिन्नतें कीं कि हुजूर, हमराह शाही फौज में चलें ।"

"क्या जवाब दिया ?"

"कहा—अपने खाँ साहब से कहो, हम अपने रास्ते आ रहे हैं, वक्त पर मिल रहेंगे ।"

"हूँ, अच्छा जाओ; शाहज़ादा साहब ! अब देर का काम नहीं, आप चित्तौड़ का क़िला एक लाख फौज लेकर घेर लें ।"

"बहुत खूब ।"

"और आप महाराज गजसिंह ! पचास हज़ार फौज की टुकड़ियाँ करके तमाम मेवाड़ के गाँवों को एक सिरे से जलाना शुरू कर दें । जो कोई रोके, फौरन कतल कर दें ।"

"बहुत अच्छा।"

"मगर एक बात का ख्याल रक्खें!"

"वह क्या?"

"औरतों पर किसी किस्म की जुल्म ज़्यादती हरगिज़ न होने पावे।"

"बहुत अच्छा!"

"अब आप जाइये, ये मग़रूर हिन्दू अब कुचले जाने ही चाहिएँ, देखता हूँ कौन इन्हें बचाता है, मैं इस कौम को जड़ से उखाड़ फेंकूँगा, इस धर्म को मटियामेट कर दूँगा।"

४

"भैया अजय!"

"बहिन!"

"अब तो और नहीं चला जाता, यह कौनसा गाँव है, आज यहीं ठहरा जाय।"

"अच्छी बात है, पर सुनो यह शोर कैसा है? यह इतना धुआँ कैसा? ये इधर हो लोग भागे आ रहे हैं।"

"अवश्य यहाँ कुछ दुर्घटना हुई है।"

"क्यों भाई, ठहरो तो, कहाँ भागे जा रहे हो, गाँव में क्या हो रहा है?"

"महावत खाँ आ पहुँचा है, उसने गाँव में आग लगा दी है और कत्ले-आम हो रहा है।"

"कत्ले-आम ?"

"जी हाँ, आप उधर न जायें।"

"कल्याणी !"

"भैया !"

"समय आगया।"

"हम लोग तैयार हैं।"

"तुम्हारे पास क्या हथियार है ?"

"दो कटार हैं।"

"यह पिस्तौल और लेलो और यहीं पेड़ के नीचे बैठकर परिणाम देखो, मैं गाँव में जाता हूँ।"

"भाई, तुम अकेले ही ?"

"नहीं, मेरी तलवार मेरे साथ है। पथिक, तुम डरो मत, कुछ देर बहिन के पास रहो, यह सूँडावत सरदार सेनापति गोविंदसिंह की पुत्री हैं।"

५

"यह कौन औरत है ?"

"हुजूर, हम नहीं जानतें, मगर इसने चालीस सिपाहियों की जान ली है।"

"इसके हाथ-पैर खोल दो और अलग हट जाओ।"

"तुम कौन हो ?"

"तुम कौन हो ?"

"महावत खाँ सिपहसालार।"

"तुमने गाँव जलाने और कत्ले-आम करने का हुक्म दिया है ?"

"हाँ"

"तुम विधर्मी और देशद्रोही तो हो ही निष्ठुर भी हो तुमसे ऐसी आशा न थी।"

"तुम कौन हो ?"

"मैं कल्याणी हूँ, तलवार हाथ में लो और मुझ से युद्ध करो।"

"कल्याणी तुम यहाँ !"

"हाँ क्या आश्चर्य होता है ?"

"ईश्वर का धन्यवाद है, क्या तुम अकेली हो ?"

"भाई आज ही वीरगति को प्राप्त हुए।"

"आह, क्या अजयसिंह ?"

"यह क्या, तुम रोते भी हो ?"

"कल्याणी प्रिये ?"

"धर्म और देश के शत्रु, हत्यारे, तलवार ले !"

"कल्याणी !"

"तलवार ले !"

"इतना क्रोध न करो, जब तुम्हारे पिता ने तुम्हें नहीं दिया यवन कह कर मेरा तिरस्कार किया, तुम्हें घर से निकाल दिया; तब मैंने क्रोध किया। कल्याणी क्या यवन मनुष्य नहीं होते ?"

"मुगल सेनापति, अब प्राणों का मोह न करो, तलवार लो, राजपूतनी का प्रेम चख चुके हो—तेज भी सहो।"

"कल्याणी ! क्षमा करो।"

"अरे देश-द्रोही, जब उस दिन मैंने बड़े गर्व से कहा था—कौन हम लोगों को अलग कर सकता है, मैं कैसी मूर्खा थी। अब देखती हूँ कि हम दोनों के बीच में भाई का मृत शरीर पड़ा है। तुमने उसे कितना प्यार किया था और उसने तुमको··· खैर ! पर उससे भी बढ़कर आज हम दोनों के बीच में स्वदेश के रक्त की नदी बह रही है, निष्ठुर, देशद्रोही, लोहू के प्यासे हत्यारे, भाइयों के शत्रु, रक्त के शत्रु, तुझे सर्व-प्रथम दण्ड देने का मुझे ही अधिकार है। ले प्रहार सह।"

(तलवार का प्रबल आघात और साथ ही स्वयं मूर्च्छित)

भस्मराशि

चित्तौड़ की अद्वितीया सुन्दरी रानी पद्मिनी ने अपनी आन निभाने को पाँच सहस्र क्षत्राणियों के साथ चितारोहण कर जौहर कर के साका रचा था। उनके रूप के लोभी क्रूर सुलतान अलाउद्दीन ने रक्तरंजित तलवार लेकर जब रंग महलों में प्रवेश किया तो उसे चिता की गर्म भस्मराशि ही मिली थी। यहाँ उसी घटना की एक रूपरेखा चित्रित की गई है)

१

"रणथम्भोर का दुर्जय दुर्ग उस दैत्य ने विजय कर लिया। सामन्त हम्मीर ने एक वर्ष वीरता से युद्ध किया और अन्त में

वीरगति को प्राप्त हुआ। वहाँ एक भी मर्द बच्चा जीवित नहीं है। लोथें गली कूचों में सड़ रही हैं। २४ हजार स्त्रियों ने जौहर व्रत करके अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा की है। वह बड़ा भयानक, बड़ा खूनी, बड़ा निर्दयी, बड़ा पतित नर पशु है। वह अब अन्धाधुन्ध चित्तौड़ पर चढ़ा आ रहा है।"

"महाराज आप अधिक भयभीत प्रतीत होते हैं।"

"महारानी, मैंने राजपूतनी का दूध पिया है और मेरी रगों में राजपूत रक्त बह रहा है। भय क्या होता है यह मैंने कभी नहीं जाना पर उस नीच का उद्देश्य अत्यन्त कुत्सित है।"

"वह चित्तौड़ पर दाँत रखता है न? चित्तौड़ रणथम्भोर नहीं। क्या आपके पास राजपूतों का अभाव है?"

"नहीं प्रिये।"

"क्या उन्हें प्राणप्यारे हो गये हैं?"

"नहीं, नहीं, प्रिये चित्तौड़ के सीसोदिया नाहरी के असल जाए हैं।"

"फिर चिन्ता क्या है स्वामिन?"

"वह चित्तौड़ विजय करने नहीं आ रहा।"

"फिर किसलिये आ रहा है?"

"वह बात कहने योग्य नहीं है।"

"फिर भी कहिये तो!"

"वह तुम्हारे लिये आ रहा है।"

"उसका ऐसा साहस?"

"उसने गुजरात के राजा कर्ण को मार कर उसकी रानी और बेटी को बलपूर्वक अपने घर में डाल लिया है।"

"परन्तु पद्मिनी गुजरात की रानी नहीं। सीसोदिया वंश की कुल वधू है।"

"पर प्रिये, उसका प्रस्ताव अद्भुत है।"

"वह क्या है सुनूँ?"

"वह केवल एक बार अपनी आंखों से तुम्हारा रूप निहार कर लौट जाना चाहता है। वह भी प्रत्यक्ष नहीं दर्पण में।"

"परन्तु चित्तौड़ के धोबी भी अपनी स्त्री की अप्रतिष्ठा नहीं सह सकेंगे।"

"प्रिये सीसोदिया सिंहल कुमारी की प्रतिष्ठा के लिये प्राण देने को प्रस्तुत हैं। मैं तूफान से टक्कर लूँगा। चित्तौड़ खण्ड-हर हो जावे, लाखों कुल वधु विधवा हो जायें, पर हम अप-मान का घूँट न पीयेंगे। हम लोहू और लोहे की होली खेलेंगे।

२

"महाराज आज युद्ध का धौंसा नहीं बज रहा, सेना जय-नाद नहीं कर रही, चारण विरद नहीं बखान रहे, कड़खैत कड़खे नहीं कह रहे, घोड़े नहीं हिनहिनाते, हाथी नहीं चिङ्घा-ड़ते, किले में सन्नाटा है, आप भी अभी महलों में शिथिल पड़े हैं, क्या युद्ध समाप्त हो गया ?"

"हाँ महारानी युद्ध समाप्त हो गया।"

"क्या हम विजयी हुए ? शत्रु भाग गये ?"

" नहीं महारानी, हमारी रसद चुक गई, हमारी सब सेना कट मरी, फसल उजड़ चुकी, गाँव जल कर राख हो गये, राज्य नष्ट हो गया, आज हमने सेना का विसर्जन कर दिया है।"

"विसर्जन कर दिया है ? नाथ यह मैं क्या सुन रही हूँ ?"

"केसर के कड़ाह भरवा दिये हैं, लोग अपने अपने अंग-रखे रंग कर केसरिया बाना धारण कर रहे हैं। आज साखा होगा महारानी।"

"साखा होगा ?"

"भूखों मरने से लड़कर मरना अच्छा है दोपहर दिन बीतने पर हम किले के फाटक खोल देंगे।"

"नहीं महाराज, ऐसा नहीं होने पायेगा ?"

"महारानी, और उपाय अब नहीं है।"

"नहीं स्वामी, मैं सुलतान की शर्त स्वीकार करूँगी।"

"छीः ! जीते जी यह कभी नहीं होगा।"

"महाराज, मैंने पक्का इरादा कर लिया है।"

"रानी यह हमारी कुल प्रतिष्ठा का प्रश्न है, तुम्हारी प्रतिष्ठा पर सारे सीसोदिया प्राण देंगे।"

"परन्तु मैं चित्तौड़ राज-कुल पर अपनी प्रतिष्ठा की बली दूँगी चित्तौड़ का सर्वनाश होने से बचा दूँगी। सहस्त्रों कुल वधुओं को भस्मराशी होने से बचाऊँगी।

"तुम क्या चाहती हो रानी ?"

"सुलतान के पास संदेश भेज दो, मुझे उसकी शर्त स्वीकार है। कह दो उस खूनी पशु से, उस म्लेच्छ से, वह आकर अच्छी तरह इस कलंकिनी का मुँह देख जाय।

"क्या तुम अपना मुख उसे दिखाओगी ?"

"हाँ महाराज।"

"हाय, मेरे जीते जी यह कैसे होगा ?"

"महाराज ! चित्तौड़ राज्य की रक्षा होनी चाहिये।"

"परन्तु.........."

"उसने यह वचन दिया है न, कि वह मुझे एक बार दर्पण में देखकर लौट जायगा।"

"कहता तो यही है।"

"मैं दर्पण के सामने खड़ी हो जाऊँगी।"

"नहीं रानी, हम मर मिटेंगे।"

"नहीं महाराज, सीसौदिया वंश फले फूले, सुल्तान के पास संदेश भेजिये।"

"महारानी !"

"महाराज, यदि आप न भेजेंगे तो मैं भेजूँगी।"

"किन्तु.........."

"महाराज, राज्य को नष्ट होने से बचाइये।"

"अच्छा महारानी, मैं संदेश भेजता हूँ।"

३

"महाराज, आज हम आप दोस्त हुए। अपकी साफ़दिली से हम बहुत खुश हैं।"

"सुलतान, मित्रों के लिए सीसौदिया-वंश सदा सब कुछ

निछावर कर सकता है आज जो काम मैंने किया है वह मेरे वंश के इतिहास में कालिख........"

"नहीं, नहीं, महाराणा, ऐसा न कहिए। यह तो आप की दोस्ती का सबूत है, कि आप ने महाराणी की परछाईं शीशे में मुझे दिखा दी, वल्लाह! जैसा सुना था उससे ज्यादा खूबसूरत पाया। महाराज, आप हमारी दोस्ती पर भरोसा रखिए, ताज़िन्दगी यह कायम रहेगी। अब हम पगड़ी बदल भाई २ हुए। लीजिये हमारी पगड़ी और दीजिए हमें अपनी।"

"परन्तु सुलतान........"

"बस अब मैं अपने क़ौल के मुताबिक़ दिल्ली लौट जाऊँगा। आप मज़े में चित्तौड़ पर हुकूमत करें। मगर आप तो क़िले के बाहर तक चले आए।"

"सुलतान, आप जैसे अतिथि की अभ्यर्थना करना हमारा धर्म है।"

"खुदा की क़सम, आप एकही बहादुर और ईमानदार राजा हैं। राजा साहेब, कहिए, मैं आपको क्या सौग़ात दूँ?"

"आपने जो दोस्ती का वचन दिया है, वही काफ़ी है। सुलतान, अब तो आपकी छावनी निकट आ गई है।"

"ओह, हाँ आपको बहुत तकलीफ़ हुई। (पुकार कर) कोई है।"

(झाड़ियों से २०० सिपाही निकलकर महाराणा को बंदी कर लेते हैं।)

"धिक्कार! सुलातान, दगाबाज़, तुम क़िले में अकेले गये थे, मैं चाहता तो कुत्तों से नुचवा सकता था।"

"बाँध लो काफ़िर को, याद रख, जब तक उस परी पैकर को मेरे हवाले न करेगा, क़ैद से नहीं छूट सकता।"

"अरे पापी यह जीते जी कभी नहीं होगा।"

"ले जाओ इसे क़ैद कर दो और कड़ा पहरा बैठा दो।"

(राणा को बाँधकर ले जाते हैं।)

४

"काकाजी, अब क्या करना होगा?"

"हम रक्त की नदी बहा देंगे।"

"उस से क्या होगा, दिल्ली के सुलतान के सामने हमारी सेना बहुत कम है।"

"हम अपने प्राण झौंक देंगे।"

"परन्तु इससे न चित्तौड़ की रक्षा होगी और न राणा की।"

"तो बेटी तेरी क्या इच्छा है ?"

"दुष्ट के साथ उसी के योग्य व्यवहार करना होगा।"

"तैने क्या विचारा है।"

"मैंने एक युक्ति सोची है।"

"कौन सी युक्ति ?"

"सुलतान को कहला भेजिये कि पद्मिनी आपकी सेवा में आने को तैयार है आप राणा को छोड़ दीजिये।"

"राम राम ! जीते जी ऐसा हो सकता है।"

"काका जी, मैं वहाँ नहीं जाऊँगी।"

"तब।"

"मेरे स्थान पर सजी हुई डोली में बादल जायगा, वह अपनी तलवार भी तैयार रखेगा।"

"अच्छा फिर।"

"सात सौ पालकियों में मेरी दासियाँ जायेंगी।"

"दासियाँ ?"

"प्रत्येक में दासी के स्थान पर दो दो शस्त्रधारी वीर बैठे होंगे !

"दो दो वीर ?"

"जी हाँ, और छः छः वीर कहार के वेष में अपने शस्त्रों को छिपाए पालकी उठायेंगे।"

"इसके बाद।"

"बादल राणा को अन्तिम भेंट करने को बुलायेगा, और अवसर पाकर राणा को भगा देगा, शिविर के बाहर आप घोड़ा तैयार रखेंगे, फिर राणा के निकलते ही सब वीर डोले से निकल कर मार काट मचा देंगे।"

"बादल—काका जी यह खेल मुझे पसन्द है, मैं जाऊँगा।"

"बेटे, तुम बालक हो, यह बड़े जोखिम का काम है।"

"नहीं नहीं आप शंका न करें।"

"अच्छा तो मैं वीरों को तैयार करूँ?"

"और सन्देश भी भेज दो।"

"अच्छा जाता हूँ।"

५

"जहाँपनाह क़ासिद आया है।"

"किसका क़ासिद?"

"चित्तौड़ के क़िले वालों का।"

"उसे हाज़िर करो ।"

"जो हुक्म ।"

(एक राजपूत आता है ।)

"क्या चाहते हो ?"

"मैं महारानी पद्मनी का सन्देश लाया हूँ ।"

"क्या सन्देश है ?"

"कुछ शर्तों पर रानी आपकी सेवा में आने को तैयार हैं ।"

"कौन कौन सी शर्तें हैं ?"

"यह कि उनके आने पर आप राणा भीमसिंह को छोड़ दें और उन्हें चित्तौड़ का राज्य और किला लौटा दें ।"

"मंजूर, और ?"

"राजा से रानी को अंतिम भेंट के लिए आधा घन्टा समय दें ।"

"मंजूर, और ?"

"रानी पर्दानशीन हैं, उनकी पद-मर्यादा भी मामूली नहीं, उनकी सात सौ खास बाँदियाँ साथ आवेंगी, उन्हें साथ रहने की इजाजत दें ।"

"मंजूर, और ?"

"उनके उतरने के लिये पर्दे का पूरा प्रबन्ध किया जाय, कोई सैनिक उन्हें देख न सके। दासियाँ भी सब पर्दानशीन हैं।"

"मंजूर है, और ?"

"उनके आने के दो घन्टे के भीतर आप चित्तौड़ का घेरा उठाकर दिल्ली को कूच कर दें।"

"मंजूर है।"

"तो मैं जाकर महारानी को सन्देश देता हूँ। आप पर्दे का प्रबन्ध कर दीजिये।"

"इत्मीनान रखो, सब जैसा कहा है वैसा ही हो जायेगा।"

६

"महाराणा, आप छोड़ दिये गये, खुशी से चित्तौड़ चले जाइये।"

"सच ?"

"जी हाँ, महारानी ने अपने को सुलतान के सुपुर्द कर दिया।"

"झूठा, दगाबाज, पाजी।"

"वे अपनी बाँदियों समेत यहाँ आ गई हैं, बादशाह ने आपको आधा घन्टा रानी से मिलने की इजाज़त दी है।"

"अगर यह सच है, तो मैं उसका मुंह न देखूँगा।"

(एक राजपूत सैनिक आता है और गुप्त संकेत करता है।)

"आइए, अन्नदाता, महारानी से भेंट कर लीजिये।"

"परन्तु मैं किसी के सामने भेंट नहीं करूँगा।"

"राना, मैं बाहर जाता हूँ, आप अकेले में मिल लीजिये।"

(सरदार बाहर जाता है)

(राजा डोली के पास आकर)

"महारानी धिक्कार है।"

"चुप, लीजिये तलवार।"

"कौन बादल ?"

"चुपचाप कनात चीरकर पीछे की ओर भाग जाइए वहाँ घोड़ा खड़ा है।"

"घोड़ा ?"

"चुप–चाप–जल्दी............"

(राणा तलवार से कनात चीर कर भागता है)

(शोर होता है)

"क़ैदी भागा।"

"पकड़ो पकड़ो।"

"मारो-मारो।"

"मारो-मारो मारो।"

"तोबा, डोलियों में बाँके सूरमा भरे हैं, धोखा दग़ा"

"जय एकलिङ्ग, मारो-मारो-मारो।"

"हथियार लाओ, घोड़ा लाओ, दग़ा दग़ा।"

"मारो-मारो-मारो............"

"या अली किधर जायें।"

"ले पाजी।"

"दग़ा-दग़ा।"

"मारो-पकड़ो।"

"ठहरो, कुत्तो! उधर कहाँ जाते हो, खड़े रहो।"

"मारो इसी को, बाँध लो।"

"सिर काट लो, कत्ल कर दो, यही सर्दार है।"

"लो, चखो राजपूती तलवार का पानी।"

"आदमी है या जिन?"

"देव है! एक हाथ में सात आदमियों का सफ़ाया करता है।"

"भागो-भागो।"

" मारो-मारो । "

"अल्लाहो-अकबर ! "

" जय एकलिंग । "

७

" महारानी, गोरा काम आए । "

" वे एक वीर की भाँति मरे । "

" पाँच हज़ार वीरों ने जान पर खेल कर युद्ध किया । "

" परन्तु अब क्या होगा ? चित्तौड़ का कुछ भी बन्दोबस्त नहीं दीखता, रसद सब चुक गई । "

"तब अन्तिम उपाय करना ही होगा । मैंने तो चाहा था...

" कल हम किले का फाटक खोल देंगे ।"

हम १४ हज़ार राजपूत-बाला हैं, सभी तलवार हाथ में लेकर युद्ध करेंगी ।"

"नहीं रानी, यदि एक भी स्त्री बन्दी होगई तो बड़ा अपमान होगा । किले की गुप्त सुरंग में यथासम्भव ज्वलनशील पदार्थ भर दिये गए हैं । पूर्वी द्वार का लौह फाटक बन्द कर दिया गया है ।"

"स्वामिन्, हम जौहर व्रत करेंगी । इस भाँति मरने का हमें गर्व है ।"

" शोक है ! वह दिन आगया !"

"शोक नहीं, महाराज, यह आन पर बलिदान होने का प्रश्न है।"

"अच्छा प्रिये, तब कल तक बिदा।"

८

"वीरो हम कितने हैं ?"

"अन्नदाता, तीन सौ दस।"

"तलवारें तो सब पर हैं ?"

"हाँ अन्नदाता।"

"जिसे प्राण प्यारे हों वह चला जाय।"

"आज हम सब अमर होंगे जय सीसोदिया वंश राजमहल भस्म हो गया वह लपटें उठ रही हैं हमारी पुत्रियाँ, बधुऐं, माताएँ सब स्वर्ग में पहुँच चुकीं, चलो हम अब चलें।"

"चलो दरबार।"

"जय एकलिंग की, फाटक खोल दो।"

"जय श्री एकलिङ्ग जी की जय !"

"जय बापा रावल की जय !"

"ठाकराँ, आज हमारा साखा है।"

"आज हम अपनी आन पर बलिदान होंगे।"

"किले का द्वार खोल दो।"

"और शत्रु पर टूट पड़ो!"

"जय एकलिंग!"

"या अली! अल्लाहो अकबर!"

"मारो-मारो।"

"काटो-काटो।"

"हाय! मरा।"

"आह!"

"मारो, गिरा दो।"

"जला दो आग लगा दो।"

"जय एकलिङ्ग!"

"जय चित्तौड़!"

"जय वीर राजस्थान!"

६

"बहिनो! वे हमारे पति और पुत्र केसरिया बाना पहिने जूझ रहे हैं, किले के फाटक खुले हैं, शत्रु अल्लाहो अकबर का नाद करते आ रहे हैं।"

"महारानी हम सब स्वर्ण-सिंहासन पर बैठने को तैयार हैं।

"हम सब कितनी हैं?"

"१४ हजार राजपूत बालाएँ हैं।"

"आज हम पति का प्रेम, परिजन का स्नेह, पुत्र का वात्सल्य, हृदय में रख कर अग्नि-देव की गोद में बैठ रही हैं।

"माता, हम अमर हो रही हैं, स्वाधीनता और पवित्रता के नाम पर।"

"बहनों! शत्रु दुर्ग में घुस आए।"

'वे यहाँ पर जलती हुई चिता और गरम राख का ढेर पावेंगे।"

"वे निकट आ रहे हैं सब कोई चिता पर बैठ जाओ।"

(छोटी राजकुमारी)

मां मैं जल जाऊँगी।"

"चलो बेटी! राजपूत बालाएँ भय नहीं खाती हैं।"

"माँ!"

"आग दो।"

"मां!"

"जलने दो, घी के कुप्पे बहा दो, तैल बखेर दो, कपूर फैला दो, राजपूत बालाओ आज अग्निदेव से तुम्हारा ब्याह है।"

"जय माता!"

"जय अग्निदेव!"

"जय मातृभूमि!"

"जय माँ वसुन्धरे !"

"जय स्वतन्त्रते !"

"जय महारानी पद्मिनी !"

"जय शीशोदिया वंश !"

"जय चित्तौड़ !"

"जय !"

"जय !"

"जय !"

वीर वध

(टाँक टोडा के राव शूरतान का राज्य टाँक के नकब ने अपहरण कर लिया था। राव शूरतान राज्य भ्रष्ट हो दर २ भटक रहे थे। उनकी पुत्री तारा अश्व और शस्त्र संचालन में किसी योद्धा से कम न थी। उसने प्रतिज्ञा की थी कि जो कोई मेरे पिता के राज्य का उद्धार करेगा उसी को ब्याहूँगी। उदयपुर के बहिष्कृत किन्तु वीर राजकुमार पृथ्वीराज ने उसकी यह प्रतिज्ञा पूरी की तथा तारा ने उसी के गले में जयमाला डाल दी)

१

(राव शूरतान का आवास)

"तारा कहाँ गई है ?"

"शिकार खेलने।"

"विचित्र लड़की है।"

"लड़की अब सयानी होगई है, वर ढूँढना चाहिए।"

"कहाँ ढूँढूँ ?

"तब जड़जीव की भाँति बैठे रहो।"

(तारा वीर-वेष में आती है)

"तुमने देखा पिता जी ?"

"क्या बेटी ?"

"बाघ का बचा !"

"बापरे ! कौन लाया उसे ?"

"मैं उसे झाड़ी में घुस कर बाघिन से छीन लाई हूँ।"

"बुरा किया बेटी, तुमने सुना नहीं, जिसका बच्चा छिन जाता है, वह बाघिन भयानक हो जाती है। सावधान रहना, कहीं आक्रमण न कर बैठे।"

"वह आवे, मैं उसे धरती पर पटक कर मार डालूँगी।"

"अरे बापरे ! बाघिन से लड़ेगी बेटी !"

"चलो पिता जी, बच्चे को देखो तो, डर नहीं है मैं साथ हूँ।"

"पगली बेटी, अब तुम सयानी हुई, यह पुरुष-वेष और शिकार उकार छोड़ दो।"

"क्यों पिताजी ?"

"बेटी, ये मर्दाने काम स्त्रियों को शोभा नहीं देते।"

"पर जब मर्द स्त्री की भाँति घर में बैठे रहें और क्षत्रिय चुपचाप शत्रु की लात पीठ पर खाते रहें।"

"बेटी तुम तो बहुत बोलने लगीं।"

"तो पिता जी मेरा बच्चा नहीं देखोगे ?"

"तेरे पिताजी भय खाते हैं, बेटी, चल मैं देखूँगी तेरे बाप का बच्चा।"

"चलो माता जी।" (दोनों जाती हैं।)

२

(एकान्त)

"सुनचुकी, एक बार हज़ारबार समझ गई तुम मुझे चाहते हो अब बार बार मत कहो, मुझे घृणा हो जायगी।"

"आह तारा, इतनी निर्दयी न बनो, मैं तुम्हें चाहता हूँ।"

"मुझे इसकी परवाह नहीं।"

"शोक, तुम प्रेम के विषय में कुछ नहीं जानती।"

"प्रेम का पाठ मैंने नहीं सीखा, मैंने सीखा है, तीर, तलवार घोड़े की सवारी, खेल, वर्धा आओ लड़ें।"

"तारा, तुम जैसी सुन्दरी को प्रेम की बातें शोभा देंगी।"

"प्रेम धनियों के भोग का विषय है, यह मुझ जैसी हीन क्षत्रियकन्या का विषय नहीं, जो एक राज्य-सुखहीन, सावन्त की बेटी है।"

"तुम क्या चाहती हो, राजकुमारी?"

"जो जन्म-भूमि का उद्धार करेगा, मैं उसी को वरूँगी।"

"यह कैसे होगा?"

"मैं नहीं जानती, मैं नारी हूँ, पर जब क्षत्रिय मर्द अकर्मण्य हो घर में बैठे वासना के दासड़े हो रहे हैं तब मैं क्या कर सकती हूँ?"

"तो तुम्हारी यही प्रतिज्ञा है?"

"यही। लौट जाइये कुमार!"

"यदि मैं तुम्हारी मातृ-भूमि का उद्धार कर लूँ?"

"तो तुम से ब्याह करूँगी!"

"प्यार करोगी?"

"यह नहीं कह सकती, हाँ, यह रूप, यौवन, सतीत्व सब

तुम्हारे चरणों में दूँगी। राजकुमार जयमल, जाऊँ !"

(जाती है।)

"जितना निष्ठुर होती है, उतनी ही लालसा बढ़ती है, उसके नेत्रों में बिजली सी कोंधा मारती है, तेज का वह अंगारा है, अद्भुत नारी है।"

(जाता है।)

३

(तारा का शयनागार)

"अन्धेरी रात है, सर्वत्र सन्नाटा है, चोर की भाँति कुमारी के शयनागार में आया हूँ। बड़ा दुस्साहस है, प्रतिज्ञा पूरी नहीं कर सकता, सेना कहाँ है ? साहस कहाँ है ? वह सो रही है, जगाऊँ ? यदि वह चिल्ला उठे ? जो हो, सो हो। छल से, बल से उसे वश में करूँगा। देखूँ, द्वार बन्द है या नहीं।

(देखता है।)

अहा ! कितनी सुन्दरी है, कैसी आँखें हैं, स्वच्छ तकिये पर केश बिखर रहे हैं। खरे सोने के जैसा रंग है, कैसा चौड़ा पुष्ट वक्षस्थल है, वे सरस होठ फड़कते हुए।

(खटका होता है, तारा चौंक उठती है।)

"कौन ?"

"प्रिये ! मैं हूँ, तुम्हारे चरणों का दास।"

"तुम ? जयमल ! यहाँ ? रात में ? अभी निकल जाओ।"

"बिना मनोरथ पूर्ण किए नहीं जाऊँगा।"

"नीच ! का पुरुष !! निर्लज्ज !!! चोर..."

"चाहे जितना गाली दीजिए।"

"जान प्यारी है तो जा बाहर।"

"प्रिये, मैंने द्वार बन्द कर लिये हैं।"

अरे नीच, इसी से सोचता है कि तू निरापद है, नहीं जानता, तारा तुझ जैसे कीड़ों को पैर से मसल सकती है, निकल बाहर।"

"मनोकामना पूरी कर दो प्रिये" (हाथ पकड़ता है)

"अधम, तेरा इतना साहस ? (तलवार खींचती है) भाग यहाँ से।"

"प्रिये, इस तलवार से तो ये भौंहें अधिक भयंकर हैं।"

"तो मर।" (वार करती है।)

"तारा, जान छोड़ दो, जाता हूँ।"

"मर, मर, कन्या के शयन-गृह को कलुषित करने वाले अधम मर।" (सिर काट लेती है)

४

(एकान्त-बन)

"ठहरो, यह मेरा शिकार है।"

"खबरदार, मैंने इसे पहले घायल किया है।"

"तब इसका फैसला तलवार करेगी, लो तलवार।"

"कौन हो तुम तेजस्वी युवक, मैं तुम से नहीं लड़ूँगा।"

"तब शिकार मुझे दो।"

"तुम कौन हो ? कहो।"

"मैं टोडा के राव शूरतान की पुत्री तारा हूँ।"

"देवी शिकार तुम्हारा है, और यह शिकारी भी।"

"बड़े कायर निकले, दीखते तो वीर जैसे हो, तुम्हारा नाम क्या है ?"

"मैं पृथ्वीराज हूँ, मेवाड़ का बहिष्कृत राजकुमार।"

"तुम ?"

"हाँ राजकुमारी।"

"तुम शिकार ले जाओ वीर, राजपूतों में तुम सा एक भी वीर नहीं।"

"तुम्हें छोड़ कर देवी ? तब आओ हम लोग मिलकर कोई नया शिकार खोजें।"

"कुमार, गरीब पशुओं के शिकार से क्या होगा ? तुम जैसे सुभट राजकुमार का शिकार तो कोई और ही होना चाहिए।"

"कौन सा शिकार कुमारी ?"

"कुमार, टोंक के नवाब ने मेरे पिता का राज्य छीन लिया

है, क्या तुम उसे बध करके मेरे पिता जी का राज्य नहीं छीन सकते ? वीर, तुम मेवाड़ में एक ही वीर हो।"

"मुझे इस वीरता का इनाम क्या मिलेगा ?"

"जो चाहोगे।"

"वचन दो कुमारी।"

"वचन दिया कुमार।"

"चलो फिर अभी, मेरे साथ पाँच सौ अजेय वीर हैं, कल मुहर्रम हैं, उसी उत्सव में अपना कार्य करेंगे।"

"चलो वीर।" (जाते हैं)

५

(टोंक के राज पथ पर)

नगर में ताजियों का जुलूस निकल रहा है।

"सब सैनिक भेष बदल कर नगर की भीड़ में मिल गये हैं। अब चलो हम भी चलें।"

"परन्तु नगर में बड़ी भीड़ है, सेना पल्टन सब तैयार है।"

"कुछ हानि नहीं, सब खाने पीने और ताजियादारी में मस्त हैं। वह देखो नवाब की सवारी आ रही है।"

"अपनी तलवार सम्हाल लो कुमार।"

"देवी, यहाँ तुम्हारा तीर काम देगा। तुम्हारा तो निशाना अचूक है।"

"आज उसकी परीक्षा होगी।" (तीर निकालती है।)

"क्षण भर ठहरो, उस पेड़ की आड़ में हो जायँ, हाँ, अब ठीक है, छोड़ो तीर।"

(तारा तीर मारती है। वह नवाब के हलक़ को फाड़ता हुआ पार जाता है। हलचल मच जाती है।)

"तलवार लेलो कुमारी, वे लोग इधर ही आ रहे हैं।"

"भय क्या है? कुमार, हम काल से भी भय नहीं खाते।"

(तलवार चलाती है।)

"मारो-मारो, पकड़ो पकड़ो।"

"अल्लाहो अकबर!"

"जय महावीर!"

"देवी, हमारे शूर भिड़ गये, घोड़े बढ़ाओ, महल पर कब्जा करें।"

"चलो कुमार, देखो वहाँ घनघोर युद्ध हो रहा है।"

"आह! वह रणजयसिंह हैं। देखो, क्या काई सी सेना को काट रहा है।"

"वह किले से नई सेना आ रही है।"

"वाह! देखो महल से धुँआ उठ रहा है। वहाँ हमारे वीर पहुँच गये हैं। और उन्होंने महल में आग लगा दी है।"

"अल्लाहो अकबर!"

"जय महावीर !"

"पकड़ो-पकड़ो ।"

"भागो-भागो ।"

"कुमारी, फाटक पर मस्त हाथी खड़ा है ।"

"अभी भगाती हूँ !" (सूँड काट लेती है । हाथी चिंघाड़ता हुआ भागता है ।)

"तौबा-तौबा !

"भागो-भागो ।"

"कुमारी शत्रु भाग रहे हैं ।"

"बढ़े चलो कुमार, आओ क़िले पर दखल करें ।"

"निर्भय चलो । फाटक पर हमारे सैनिक पहुँच गये ।"

"जय महावीर ! जय महाराज पृथ्वीराज !!"

"भागो-भागो ।"

"भागो-भागो ।"

"मारो-मारो ।"

"भागो-भागो ।"

"कुमारी, क़िला विजय हो गया । वीरसेन हरा झण्डा गिरा दो, सूर्य-चिन्ह का झण्डा उड़ा दो ।

"महाराज, यह खज़ाने की चाबियाँ हैं ।"

"महाराज, नवाब के घर की सब स्त्रियाँ क़ैद होगई हैं ।

"महाराज नवाब की सेना ने हथियार रख दिये।"

"सब को चुपचाप चले जाने दो। घोड़े हथियार सब के छीन लो।"

"जो आज्ञा।"

"चलो कुमारी किले में चलें।"

"चलो कुमार।"

[जाते हैं।]

६

(रङ्ग महल में)

"नाथ, प्रेम का पाठ तो मैंने सीखा नहीं था। आपने ही सिखाया।"

प्रिये, इस विषय में मैं तुम्हारा गुरु भी हूँ और शिष्य भी।"

"मैंने कभी नहीं सोचा था। कि मैं तुम्हें कभी इतना प्यार कर सकूँगी, राह घाट में चारणों के द्वारा आपकी कीर्ति जब सुनती थी, तब देखने की इच्छा होती थी और भी एक इच्छा होती थी।.........."

"क्या इच्छा होती थी प्रिये ?"

"कि तुम्हीं को पति रूप में वरूँ।"

"इसके बाद ?"

"इसके बाद जब पहली बार देखा तो—"

"तो क्या हुआ प्रिये ?"

"मन के अनुसार रूप नहीं दीखा, कठिन भावों से भरा मुख देख भय का सा सञ्चार हुआ।"

"भय का सञ्चार हुआ ? फिर ?"

"फिर ज्यों ज्यों आप से मिली, अधिक से अधिक तुम्हें उदार पाया।"

"सच प्रिये ?"

"मैं मुग्ध हो गई, और आज तो इन चरणों की मन वचन से दासी हूँ।"

"तारा ! प्रिये !!"

"नाथ ?"

"मैंने कभी नहीं सोचा था कि इस कठोर युद्ध-स्थली रूपा पृथ्वी पर स्निग्ध और उज्ज्वल आलोकमयी चलती फिरती चाँदनी कहीं हो भी सकती है ?"

"स्वामी।"

"वह सदेह संगीत, जिसने मुझे आत्मविस्मृति करा दी।"

"प्राणेश्वर यह आपके अन्ध-प्रेम का फल है, मैं न चांदनी हूँ, न ज्योति हूँ, न संगीत हूँ। केवल आपकी दासी तारा हूँ।"

हलाहल से ब्याह

(महाराणा भीमसिंह की पुत्री कृष्णा परम सुन्दरी थी। उसे बलपूर्वक ब्याहने को जयपुर और जोधपुर के राजाओं ने उदयपुर पर चढ़ाई करदी। वे उदयपुर के अस्तगत दिन थे। मराठों के आक्रमण ने उसे खोखला कर दिया था। उसमें युद्ध का बल न था नवाब अमीर अली ने राणा को विष देकर मार डालने की सम्मति दी। राणा ने निरुपाय यही किया। यहाँ उसी का रेखा चित्र उपस्थित करते हैं।)

(जयपुर का राजमहल)

"घणी खम्मा, अन्नदाता की जय हो !"

"तुम हो धनदास, क्या समाचार है ?"

"महाराज, इस फुलवारी के सभी फूलों का आप रस ले चुके, नयों में धतूरा–मदार बच रहे हैं। जयपुर भरमें तो महाराज के योग्य नया फूल है ही नहीं।"

"अरे तुम तो कविता करने लगे। क्या सागर में जल सूख गया ?"

"अन्नदाता, अगस्त्य मुनि जब सोखने लगे तो सागर का जल कैसे रहे ?"

"परन्तु तुम जैसे मेघों के रहते सागर का जल सूख कैसे जाय ?"

"तो अन्नदाता चिन्ता न करें। पृथ्वी पर सात सागर हैं, सात ?"

"तब फिर ?"

"श्रीमान् ! यह चित्र तो देखें।"

"वाह ! यह अछूता अनहोना फूल कहाँ से आया भाई ?"

"श्रीमान् यह अमृत चन्द्रलोक का है, वहाँ तक पहुँच सम्भव नहीं है।"

"खुलासा कहो और वह गिलास मद भर दो ।"

"लीजिए प्रभु, मद आरोपिए ।"

"पर यह चित्र ?"

"उदयपुर की राजकुमारी का है ।"

"ठीक है तो यह नन्दन-कानन का पारिजात पुष्प है ।"

"जी हाँ श्रीमान्"

"देखो धनदास"

"आज्ञा अन्नदाता"

"यह चित्र मुझे दे दो"

"सेवक का सर्वस्व आपके चरणों में अर्पित है, परन्तु"

"परन्तु क्या ?"

"यह चित्र दास का नहीं है, एक व्यापारी का है ।"

"उससे खरीद लो, खजाने से मूल्य दिलवा दो ।"

"अन्नदाता ! वह बहुत मूल्य माँगता है ।"

"कितना ?"

"बीस हजार मोहरें ।"

"खजाने से दिला दो ।"

"जो आज्ञा प्रभु ।"

[मन्त्री आता है ।]

"घणी खम्मा कुछ आवश्यक पत्रों पर हस्ताक्षर करना है।"

"उन्हें कल लाना मन्त्री, अभी एक और विषय पर बात करनी है।"

"आज्ञा !"

"महाराना भीमसिंह के कितनी सन्तान हैं ?"

"एक कन्या है कृष्णा।"

"सुन्दरी है ?"

"प्रशंसा तो सुनी है।"

"तो उसकी मंगनी को आज ही पुरोहित जी को भेज दो।"

"महाराज इसमें एक विघ्न है।"

"कैसा विघ्न ?"

"कन्या की मंगनी महाराज जोधपुर से हो गई थी।"

"उनका तो स्वर्गवास हो गया।"

"उनके भाई वर्तमान जोधपुर-पति ने मंगनी स्वीकार कर ली है।"

"मेरे रहते जोधपुर-नरेश उस कन्या को नहीं ब्याह सकता, तुम मंगनी भेज दो।"

"महाराज, यह समय घरू विद्रोह का नहीं है, राज्य पर चारों ओर से विपत्ति के बादल घिर रहे हैं।"

"मैं इस विषय में कुछ न सुनूँगा। राणा ने यदि मेरी मंगनी वापस की तो तलवार के जोर पर कुमारी को ब्याहूँगा।

"महाराज !......"

"बस हम चाहते हैं कि धनदास स्वयं जायँ।"

"अन्नदाता का यह सेवक प्रस्तुत है, परन्तु दर्बार वहाँ पद मर्यादा से जाना ठीक होगा।"

पाँच सौ घोड़े, पचास हाथी और एक हज़ार पैदल साथ ले जाओ; मन्त्री जी अभी प्रबन्ध कर दो।"

"जो आज्ञा महाराज।"

२

(उदयपुर का राजमहल)

"स्वामी आपका विषाद पूर्ण मुख मण्डल देख कर मेरा हृदय टुकड़े टुकड़े हो रहा है।"

"प्रिये जिसे लोग राजभोग कहते हैं वह केवल सुखभोग ही नहीं है; रामसिंह।"

"अन्नदाता !"

"यह पत्र सत्यदास को देकर कहो कि इसका उत्तर आज ही चला जाय।"

"बड़ो हुक्म अन्नदाता !"

"प्रिये, भगवान एकलिङ्ग के प्रसाद से राज्य-लक्ष्मी अभी तक राज प्रासाद में स्थिर है, परन्तु आगे चलकर रहेगी या नहीं इसमें सन्देह है।"

"महाराज, त्रेतायुग से इस राज भवन में लक्ष्मी का निवास है, यह पवित्र सीसोदिया वंश अभी भ्रष्ट नहीं होगा।"

[सेवक आता है]

"घणी खम्मा अन्नदाता, मन्त्री जी ने कहा है, यह पत्र आया है।"

[राणा पत्र पढ़ते हैं]

"धन्य ईश्वर, कुछ दिन के लिये राज्य के निरापद होने की आशा बँधी।"

"किसका पत्र है स्वामिन्?"

"मरहठा पेशवा का, उन्होंने लिखा है, तीस लाख रुपये लेकर वे लौट जायेंगे। धिक्कार है मुझे, ये तस्कर लोभी मरहठे इस प्रकार राज्य को लूट रहे हैं, और मैं महाराणा प्रताप का वंशधर होकर चुप चाप लोहू का घूंट पी रहा हूँ।"

"महाराज, रक्त की नदी बहाने से तो धन देकर पिण्ड छुड़ाना अच्छा!"

"पर तुम क्या समझती हो कि यह नराधम हमें सदैव के

लिये छोड़ देगा ? बिल्ली जहाँ एक बार गोरस की गन्ध पाती है, बार बार वहीं चक्कर काटती है ।"

(धौंसा बजता है)

"यह धौंसा कैसा ? रामसिंह !"

"हुक्म अन्नदाता ।"

"अरे यह क्या विपत्ति है ,क्या लुटेरा मरहठा पेशवा किले पर चढ़ आया ?"

(एक सेवक आता है)

"अन्नदाता, जयपुर से दूत आया है ।"

"खैर हुई, जयपुर महाराज तो मित्र हैं, मन्त्री से कहो उनके स्वागत सत्कार की ठीक व्यवस्था करें ।"

"बड़ो हुक्म अन्नदाता ।"

"प्रिये, कचहरी में जाकर देखूँ, जयपुर का दूत क्या सन्देश लाया है ?"

"स्वामी, इस दासी को क्षण भर भी चरण-सेवा का अवसर नहीं मिलता ।"

"महारानी, इसके लिये खेद न करो, लोग जिसे नरपति कहते हैं; वह वास्तव में नरदास है, प्रजा का सुख दुख उसी पर निर्भर है, वह दम भर भी क्या विश्राम कर सकता है ?"

जाता है)

३

(उदयपुर की राज सभा)

"आपका शुभ नाम क्या है ?"

"श्रीमान, दास को धनदास कहते हैं।"

"सुना है जयपुर नरेश किसी वेश्या के वश में हैं।"

"अन्नदाता—कहीं भौंरा भी फूल के वश में होता है।"

"महाराज के आचरण की भी अनेक बातें सुनी जाती हैं।"

"श्रीमान्, यह तो बड़े घरों में होता ही रहता है।"

"परन्तु यह कलंक की बात है।"

"महाराणा जी, चन्द्रमा में कलंक होने पर भी उसकी कोई अवज्ञा नहीं करता।"

"जयपुर महाराज को ात है कि कन्या की मँगनी मारवाड़ से हो चुकी है ?"

"दरबार, जिनसे मंगनी हुई थी—उनका तो स्वर्गवास हो गया।"

"परन्तु उनके भाई मानसिंह को मैंने स्वयं संदेश दिया है।"

"महाराज भली भाँति सोच लें, मेरे महाराज यह अपमान नहीं सहन करेंगे।"

"जयपुर नरेश हमारे आत्मीय हैं, उन्हें आप समझा दें कि व्यर्थ आपस में लड़कर शक्ति क्षय न करें। आप यह अँगूठी

प्रमोपहार ग्रहण करें। आप यदि महाराज को शान्त रखेंगे तो और भी उपहार मिलेगा।"

"जो आज्ञा महाराज, मैं चेष्टा करूँगा।"

(जाता है)

४

(उदयपुर रंग महल)

"जोधपुर से दूत लौट आया है न ?"

"जीहाँ श्रीमान्, मारवाड़-पति मानसिंह ने तलवार छूकर प्रतिज्ञा की है कि वह सुकुमारी कृष्णा से अवश्य विवाह करेंगे, और राणा यदि इस वचन को लौटेंगे तो उदयपुर को मिट्टी में मिलाकर महाराणा के राज्य को नष्ट भ्रष्ट कर दिया जायेगा।"

इस कलिकालकी वीरता का यही लक्षण है मुर्दे के ऊपर तलवार मारकर आजकल लोग अपनी वीरता का बखान करते हैं। और क्या समाचार है ?"

"महाराष्ट्रपति माधवराव ने पत्र भेजा है कि आपको कन्या मारवाड़ नरेश को ही ब्याहनी होगी, नहीं तो मेरी सेना समस्त मेवाड़ को जला कर खाक कर देगी।"

"यह भी ठीक है, इन लोभी कुत्तों को वहाँ से टुकड़े मिल गये होंगे। अच्छा जयपुर का क्या समाचार है ?"

"महाराज जगतसिंह एक लाख सेना लेकर उदयपुर की ओर रवाना हो चुके हैं।"

"रवाना हो चुके हैं ? तब तो सर्वनाश में देर नहीं है, मन्त्री जी न तो आज मेरे पास सेना है न खजाना है मैं मेवाड़ का कलंक रूप हूँ, धिक्कार है मुझे, परन्तु मन्त्री जी बहेलिये के भय से सियार बिल में घुस बैठता है सिंह नहीं, अभी महाराणा प्रताप का रक्त मेरी नसों में है, मैं युद्ध करूँगा।"

"किन्तु महाराज इतने स्वार्थी हत्यारों से !"

"भले ही प्राण जायें।"

"अन्नदाता, प्राण जायें तो हानि नहीं परन्तु उसके बाद ?"

"अभी तक मेवाड़ के इतिहास में अत्याचारी यवनों के कारण जौहर-व्रत हुए थे, इस बार घरेलू युद्ध में जौहर होगा।"

"अन्नदाता, एक और दुखदाई समाचार है।"

"इससे भी अधिक ? शीघ्र कहो।"

"प्रभु ! कह नहीं सकता।"

"किसका पत्र है ?"

"नवाब अमीर अली का।"

"क्या कहता है वह डाकू ?"

"श्रीमान् जीभ कट जाय वह अच्छा; पर वह बात यह दास नहीं कह सकता।"

"मन्त्रीजी, आप तो इस राजकुल के सब सुख दुःखों के साथी हैं। कहिये, मुझ में बुरी से बुरी बात सुनने की शक्ति है,

यह डाकू किसके पक्ष में है ?"

"जगतसिंह के, परन्तु इस पापी ने तो एक भयानक प्रस्ताव किया है।"

"पढ़ो, मन्त्री पत्र पढ़ो !"

"अन्नदाता, आज्ञा हो तो पत्र को फाड़कर फेंक दूँ।"

"नहीं, उसे पढ़ो ।"

"तो श्रीमान् स्वयं ही पढ़ लें।"

[पत्र देता है राणा पढ़ते हैं।]

"मंत्री जी बड़ी कड़वी औषध है परन्तु रोग आराम हो जायगा।"

"स्वामिन्, यह काम तो पृथ्वी का कोई हिंस्र पशु भी नहीं कर सकता ।"

"मन्त्रीजी, आवश्यकता पड़ने पर तो अपना हृदय फाड़कर रक्त देना पड़ता है।"

"अन्नदाता, वह तो बहुत सरल है।"

"मन्त्री जी, क्षात्र-धर्म बड़ा दुस्तर है, देश भर को नष्ट करने और पृथ्वी पर रक्त की नदी बहाने से यह कुकर्म मुझे अधिक रुचिकर प्रतीत हुआ।"

"अन्नदाता, यह क्या आज्ञा दे रहे हैं ?"

"मन्त्रीजी, मैं सीसौदिया-कुल का कलंक हूँ—रक्तपात

रोकने के लिये मैं इस पापी के प्रस्ताव को पसन्द करता हूँ।"

"अन्नदाता !"

"अब उसकी व्यवस्था करनी होगी।"

"अन्नदाता, सेवक का सिर काट लीजिये पर यह काम दास से न होगा।"

"मन्त्रीजी, इस विपत्ति में मुझे अकेला मत छोड़ो।"

"स्वामी, मैं स्वयं ही विष पान करूँगा।"

"परन्तु उससे देश का नाश न रुकेगा।"

"महाराज..........."

"बस, गुपचुप बन्दोबस्त कर दीजिये।"

"रक्षा कीजिये, अन्नदाता !"

"मन्त्रीजी, अब कुछ न कहो मेरे नेत्रों में अन्धकार छा रहा है, मेरा शरीर अवसन्न हो रहा है।"

(मूर्च्छित होकर गिर जाते हैं।)

६

(उदयपुर के राजमहल का कक्ष)

"कैसा अँधेरा है, आकाश में एक भी तारा नहीं दीख पड़ता, गीदड़ रो रहे हैं, दुर-दुर, कौन है यह ? इतना लम्बा ताड़ के समान कौन है ?"

"सेवक है रघुबीरसिंह।"

' आह ! मैं समझा प्रेत है, घोड़ा तैयार है ?"

"जी हाँ, श्रीमान् ।"

"धीरे बोलो, घोड़ा कहाँ है ? उधर ले आओ ।"

[मन्त्री आते हैं ।]

"कुमार आप कहाँ चले ?"

"अरे, मन्त्रीजी हैं, मैं-मैं तनिक कार्यवश......"

"छी: कुमार, इस विपत्ति में महाराज को त्याग रहे हैं आप ?"

"मन्त्रीजी, अभी मुझे बात करने का अवकाश नहीं है ।"

"चलिए कुमार, अन्नदाता आपको याद कर रहे हैं ।"

"मन्त्रीजी, मैं चाण्डाल जल्लाद नहीं, इस पाप और कलंक के काम को राणा जी ने मुझे सौंपा है, भला मैं कैसे अपने कोमल हृदय को वज्र बना लूँ, हाथी कमल-दल को अनायास ही पैरों से कुचल डालता है, पर वह दीन पशु है, कहीं मनुष्य भी पशु की भाँति हो सकता है ? नहीं, मैं वह काम कभी न करूँगा। शिव-शिव !"

"कुमार, एक बार आप राज-मन्दिर में तो चलिए, अन्नदाता को देखकर कलेजा मुँह को आता है ।"

"क्या महाराणा की दशा बहुत खराब है ?"

"उन्हें रह-रहकर मूर्च्छा आती है। हाय ! उनका दुःख

देखकर छाती फटती है।"

"मन्त्रीजी, मुझे जाने दीजिये।"

"कुमार, आप दर्बार के पैर छूकर प्रतिज्ञा कर चुके हैं आप वीर हैं आप क्षत्रिय हैं।"

"अब तो मुझे जल्लाद कहिए।"

"कुमार, क्षत्रिय-व्रत बड़ा कठोर है।"

"हायरे क्षत्रिय-व्रत !"

"तो कुमार, आप राज-महल में जारहे हैं न ?"

"जा रहा हूँ, मँत्री। अपना लोक परलोक दोनों तय करने मुझे छुओ मत—मैं चाण्डाल—जल्लाद-हत्यारा—खूनी···"

"शान्त हूजिये, कुमार ऐसी बातें रास्ते में·········"

"अच्छा मन्त्रीजी, आप महाराज सेकहदें कि हत्यारा पापी अपने काम पर चला गया। प्रातःकाल जब वे सुख-सेज से उठेंगे तब·········"

(सिर पीटकर रोता है।)

७

(उदयपुर राजमहल)

"बलभद्रसिंह गया न मन्त्रीजी ?"

"जीहाँ अन्नदाता।"

"हायरे विधाता ! मेरे भाग्य में यह भी लिखा था अरी पुत्री

अब मैं तेरा चन्द्रमुख न देख पाऊँगा।"

"महाराज, चलकर राजभवन में विश्राम कीजिए।"

"अरे राजभवन में अब विश्राम? लाओ एक प्याला मुझे भी दो।"

"धर्मावतार!"

"मुझे धर्मावतार मत कहो, अरे, मैं चाण्डाल–कायर–क्षत्रियाधम हूँ, मैं साक्षात् कलियुग का अवतार हूँ।"

"स्वामी! यह समय की बलिहारी है।" "देखो इस दुष्कर्म को यह रात्रि आँखें फाड़–फाड़कर देख रही है, इसने चन्द्र नक्षत्र आदि के सब अलंकार उतार फेंके हैं, कैसा भयानक अन्धकार है। अरे अन्धकार, मुझे ग्रस ले। देखो इन्द्र कुपित हो-होकर बिजली के चाबुक मार रहा है, कैसी भयानक कड़कड़ाहट है; क्या आज प्रलय होने वाला है? अरे वज्र मेरे सिर पर गिर, आ काल–रात्रि, मुझे ग्रस, अरे, जब रात बीत जायगी; प्रकाश होगा तो मैं कैसे दुनिया को अपना मुख दिखाऊँगा?

"अन्नदाता, धैर्य धारण कीजिए, देश की रक्षा के लिये···"

"अरी बेटी कृष्णा, आ, आ! एक बार तुझे प्यारकर हृदय की ज्वाला शान्त करूँ। ओ बलभद्र! अरे बलभद्र!! क्या करते हो, ठहरो-ठहरो, नहीं-नहीं, हाँ–हाँ, हाँ, अरे! ठहरो, ऐसा काम

मत करो। अरे! ………(मूर्च्छित होकर गिर पड़ते हैं।)

८

(कुमारी कृष्णा का महल)

"कितनी बार इस महल में आया हूँ, परन्तु आज तो पैर ही नहीं उठते, आज मैं चोर हत्यारे की भाँति आया हूँ, राम-राम, मेरा उद्देश्य कैसा हीन है, इच्छा होती है, इस विष को पीलूँ, परन्तु इससे क्या होगा? (शयनगृह को देख कर) पलंग अभी सूना है, कृष्णा अभी तक सोने नहीं आई।"

[कोमल गीत और वाद्य ध्वनि सुन पड़ती है।]

[दासी आती है।]

"अरे, महाराज कुमार, आप हैं? इस समय यहाँ?"

"कृष्णा कहाँ है?"

"संगीतशाला में, पगली लड़की, सन्ध्या ही से एक गीत के पीछे पड़ी है, कहती हूँ सो रहो, सो सुनती ही नहीं। महारानी तो कब की शयन मन्दिर में सोने गईं।"

"जा कृष्णा को बुला ला!"

(दासी जाती है।)

"हाय भाग्य, मेरे ही हाथों से इस कोकिल कण्ठी की हत्या लिखी थी, अरे, मैं कैसे इस निरपराध बालिका की हत्या का महापाप करूँगा, वह कृष्णा आ रही है। क्या करूँ? भागूँ?

अरे, मैंने प्रतिज्ञा की है, क्षत्रिय की प्रतिज्ञा, हाय रे क्षत्रिय धर्म !!" [कृष्णा हँसती हुई आती है।]

"आप क्यों आए चाचा जी ?"

"क्यों बेटी, सोचा बहुत दिन से नहीं देखा था, देख आऊँ।"

"ऐसी अंधेरी रात में, देखिए कैसी अंधियारी छा रही है, चन्द्रमा अस्त हो गया, और उसके विरह में रात्रि जैसे दुःख सागर में डूब रही है।"

"अरे बिटिया, तुम तो कविता भी करती हो।"

"चाचा जी, आप ने वह मेरा नया गीत सुना है ? चलिए सुनाऊँ।"

"अब नहीं बेटी—फिर।"

"फिर ? अरे, आप काँप क्यों रहे हैं, रोते हैं, क्यों चाचा जी कहिए, पिता जी कुशल से तो हैं।"

"बेटी, मुझे चाचा न कहो।"

"चाचा जी ?"

"हाय री पृथ्वी, तू फट जा और यह अधम उस में समा जाय।"

"चाचा जी, आप इतने व्याकुल क्यों हैं ?"

"अरी बेटी, इस अधम हत्यारे से यों न बोल।"

"चाचा जी कहो क्या बात है ?"

"बेटी तुझे मरना होगा।"

"क्यों चाचा जी ?"

"देश और राज्य की रक्षा के लिये, हमारे संकट तो तू जानती ही है। जयपुर और जोधपुर नरेश दोनों ही तुझे ब्याहना चाहते हैं। सहस्रों मनुष्यों को रक्तपात से बचाने का यही उपाय है।"

"तो यह तो बड़ी अच्छी युक्ति है। चाचाजी, मैं तैयार हूँ।"

"हाय बेटी ! मैं विष लेकर आया हूँ।"

"मुझे दीजिये चाचाजी, मेरा अहोभाग्य जो मेरे बलिदान से राज्य की आपत्ति टले।"

"बड़ी भारी आपत्ति है, बेटी।"

"विष दीजिये चाचाजी।"

"बेटी, मैं चाण्डाल क्या प्रतिज्ञा कर बैठा !"

"चाचाजी, मैं महाराणा भीमसिंह की पुत्री हूँ; मेरी दादियों ने भी हँसते हँसते अपने को भस्म किया था।"

"आह बेटी !"

(विष की शीशी जेब से निकाल लेती है।)

"यही है वह, चाचाजी !"

"बेटी, उसे न छूना। नहीं-नहीं, यह कभी न होगा-प्राण

रहते......"

"चाचाजी ! पिताजी से प्रणाम कहना।"

(पी लेती है)।

"हायरी बिटिया !"

"चाचाजी, माताजी को धैर्य देना।"

"हारी बिटिया ! मैं अभी प्राणघात करूँगा। कहाँ है मेरी तलवार !"

(कृष्णा पृथ्वी पर गिर जाती है। राणा और मन्त्री आते हैं।)

"कहाँ है बेटी, कृष्णा ! कृष्णा !! कृष्णा !!!"

"महाराज, धैर्य !"

"मन्त्रीजी, महाराज को यहाँ क्यों ले आए ! अरे, यह तो पागल हो गये हैं।"

"वे रुक नहीं सके कुमार, कड़ी छाती करके उन्हें समझाइये।"

"कहाँ है ? बलभद्रसिंह, छीः छीः ! ऐसा काम न करना, लाओ, उस चीज को मुझे देदो, फैंक दो, फैंक दो। मानसिंह मुझे कैद करेगा ? उसकी क्या मजाल ? कौन है ? यह जगतसिंह, तुम्हें क्या अधिकार......बेटी, वीणा बजाओ, निर्भय गाओ—गाओ—हँसो—कूदो—बेटी कृष्णा ! कृष्णा........"

"महाराज, शान्ति !"

"वह क्या है ? कृष्णा ! धरती में पड़ी है, तो क्या वह... अरे नहीं, बलभद्रसिंह ! ओ हत्यारे !! मैंने मना किया था, उठो बेटी ! इधर देखो, मैं महाराणा भीमसिंह हूँ, सीसौदिया-वंश का उत्तराधिकारी, प्रताप का वंशज—मैं तलवार लेकर शत्रु का नाश करूँगा मेरे रहते......उठो......उठो..."

(पागल की भाँति चिल्लाता है)

(मूर्छित होकर गिर जाता है)

स्वयंवरा

(रूपनगर की राजकुमारी पर मोहित होकर मुगल सम्राट् औरंगजेब ने उसका डोला माँगा। राजा अशक्त था उसने स्वीकार किया, परन्तु कुमारी ने उदयपुर के महाराजा राजसिंह से सहायता मांगी। राजसिंह ने अकस्मात आकर उसका उद्धार किया, और विवाह किया। यही, रेखा चित्र यहाँ चित्रित है !)

(रूपनगर का राजमहल)

१

"बुड्ढी तेरे पोपले मुँह में कितने दाँत हैं?"

"बेटी, मैं दिल्ली रहती हूँ !"

"दिल्ली में बिल्लियाँ बहुत हैं ?"

"मैं तस्वीरें बेचती हूँ, मेरा बेटा मुसव्विर है ?"

"तू पत्थर है, दिखा कैसी तस्वीरें हैं ?"

"मेरी तस्वीरें तुम्हारे लायक नहीं हैं, वह राजकुमारी जी "के लिये लाई हूँ।"

"(राजकुमारी चँचल कुमारी आती है, सब लड़की चुप हो "जाती हैं)

"मेरे लिये जो जो तस्वीरें लाई हो, वह दिखाओ।"

"मैं कुर्बान। कुमारी जी, आप तो खुद ही एक तस्वीर हो।"

"तुम अपनी तस्वीर दिखाओ ?"

"ये अकबर, जहाँगीर, शाहजहाँ, नूरजहाँ की तस्वीरें हैं।"

"क्या तुम्हारे पास हिन्दू राजाओं की तस्वीरें नहीं ?"

"जी हाँ हैं, राजा मानसिंह, जगतसिंह, जयसिंह की तस्वीरें हैं, देखिये।"

"ये हिन्दू राजाओं की तस्वीरें नहीं हैं। बादशाह के नौकरों की हैं।"

"यह राणा प्रतापसिंह, अमरसिंह, करनसिंह, जसवन्त सिंह की तस्वीरें हैं।"

"हाँ इन्हें रख दो, इन्हें मैं मोल ले लूँगी, वह कौन तस्वीर तुमने छिपा ली।"

"माफ कीजिये कुमारी जी वह तुम्हारे दुश्मन की तस्वीर है।

"किसकी है देखूँ ?"

"उदयपुर के राना राजसिंह की है, वे तुम्हारे पिता के बैरी हैं।"

"वीर राजपूत स्त्रियों से बैर नहीं करते, यह तस्वीर मैं मोल लूँगी।"

"सखियों देखो, यह एक सच्चे राजपूत की तस्वीर है। और किसकी तस्वीरें हैं ?"

"देखिये, यह आलमगीर बादशाह की तस्वीर है।"

"अजब तस्वीर है, मैं तो इसे जूते की नोक पर मारती हूँ।"

"खामोश अगर बादशाह सुन पायेंगे तो रूपनगर के किले की एक ईंट तक न मिलेगी।"

"यह बात है ? सहेलियों, इस तस्वीर पर वारी बारी से एक एक लात मारो !"

[सब लात मारती हैं]

"लो बीस मुहर दाम, और बीस मुहर इनाम जाओ।"

२

(दिल्ली का शाही रंगमहल)

"जहाँपनाह ने सुना, उस मगरूर लड़की ने हुजूर की तस्वीर

पर लात मारी है।

"मैं रूपनगर के राजा विक्रम से जवाब तलब करूँगा।"

"अगर जहाँपनाह इसे दरगुज़र करेंगे तो शाही रूआब डूब जायगा, इस काफिर मग़रूर लड़की से मैं पैर दबवाऊँगी

"मैं गौर करूँगा।"

"जहाँपनाह अभी सिर्फ गौर ही करेंगे? उसका डोला तलब नहीं कीजिए?"

"मगर……"

"हुजूर अगर ऐसा न होगा तो शाही जलाल को बट्टा लगेगा।"

"अच्छा मैं मुबारक खाँ को फौज लेकर रूपनगर भेजता हूँ वह वहाँ के राजा की लड़की का डोला दिल्ली ले आयेगा।"

"यही होना चाहिये।"

३

[रूपनगर का महल]

"महाराज अब क्या विचारा है यह तो बड़ी विपत्ति है।"

"है तो, पर किया क्या जा सकता है। यदि लड़की शाही महल में जाती है तो ऐसा कुछ हर्ज भी नहीं है सभी राजपूतों की लड़कियाँ शाही महल में गई हैं।"

"किन्तु लड़की जान दे देगी वहाँ न जायगी।"

"उस बेसमझ को तुम समझा देना महारानी, इसमें ऐसी हानि ही क्या है?"

"मैं तो कभी उसे ऐसा करने को न कहूँगी।"

"पर डोला तो दिल्ली भेजना ही पड़ेगा।"

"तो आपने यह निर्णय कर लिया?"

"और हम कर ही क्या सकते हैं, बादशाहों से लड़ने की हमारी शक्ति नहीं।"

"हम अभागिनियों का भाग्य! आप राजपूत हो कर ऐसी बातें करते हैं?"

"तो रानी एक लड़की के लिये मैं अपने राजपाट और जान माल की बर्बादी भी तो नहीं कर सकता।"

"शोक, महाशोक।"

४

[रूपकुमारी का महल]

"अब क्या करोगी कुमारी?"

"चाहे जो हो, पर मैं मुगलों की लौंडी तो न बनूँगी।"

" 'ना' कहोगी?"

" 'ना' कहने से पिता पर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ेगा,

शाही सेना रूपनगर में रक्त की नदी बहा देगी।"

"तब क्या करोगी ?"

"या तो राह में ज़हर खाऊँगी, नहीं तो आलमगीर के कलेजे में कटार भोंककर बताऊँगी कि राजपूतनी को छेड़ना कितना भयानक है।"

"एक काम क्यों न किया जाय।"

"क्या ?"

"राणा राजसिंह को पत्र लिखिये।"

"पत्र लेकर इतनी जल्दी जायगा कौन ? परसों तो शाही फौज मुझे लेकर चली जायगी।"

"राजपुरोहित अनन्त मिश्र आज ही चल देंगे, मैंने उन्हें पक्का कर लिया है, तुम पत्र लिखो।"

"क्या लिखूँ ?"

"लिख दो कि राजपूत कन्या का धर्म डूबता है, आप के सिवा उसकी रक्षा करने की शक्ति राजपूताने में किसी में नहीं है।"

"लिखती हूँ, तू अनन्त मिश्र को बुला ला।"

"जाती हूँ।"

५

(उदयपुर की राह में)

"कहाँ जा रहे हो देवता ?"

"उदयपुर जाना है, कितनी दूर है ?"

"थोड़ी ही दूर है, हम भी वहीं चलते हैं, व्यापारी हैं, अच्छा साथ रहेगा।"

[सब साथ जाते हैं। डाकू अवसर पाकर अनन्त मिश्र पर आक्रमण करते हैं]

"रख दो पास क्या है ?"

"मैं गरीब ब्राह्मण हूँ।"

"मारो तलवार।"

"मुझे मत मारो, मैं···ब्राह्मण हूँ।"

"लो दे माल मता।"

"मैं गरीब···।"

"मारो तलवार।"

(एक सवार आता है)

"खबरदार (एक डाकू को घायल करता है दूसरे को मार डालता है शेष डाकू भाग जाते हैं।)

"कौन हो तुम ?"

"गरीब ब्राह्मण।"

"डरो मत, कहाँ जा रहे हो ?"

"उदयपुर।"

"किसके पास ?"

"राणा जी के।"

"कहाँ से आये हो।"

"रूपनगर से, आप कौन हैं ?"

"मैं ही राणा हूँ, जो कहना है निर्भय कहो।"

"यह पत्र है।"

[पत्र देता है।]

"राणा पत्र पढ़ते हैं। ब्राह्मण मोतियों की माला गले में डाल देता है।]

(घायल डाकू हाथ जोड़ कर खड़ा होता है]

"तुम कौन हो ?"

"राजपूत, मेरा नाम मानिक है।"

"मुझे पहचानते हो।"

"आप हिन्दुपति महाराणा हो।"

"ऐसा नीच कर्म क्यों करते हो ?"

"आज से त्यागा और आपकी शरण हुआ।"

"पर तुमने ब्राह्मण को लूटा।"

"उसके लिये मैं यह दण्ड स्वीकार करता हूँ।"

[खट से अपनी उंगली काट लेता है।]

"वीरहो ?"

"अब आप सेवा में ले लीजिये।"

"अभी तुम घर जाओ—उदयपुर में मिलना।"

(कुछ रुपये देते हैं। बिगुल बजाते हैं।)

सौ योद्धा इधर उधर से आ जुड़ते हैं।)

"वीरो, हमें अभी एक मुहिम पर जाना है। जहाँ से लौटने की बहुत कम आशा है। मेरी आज्ञा है जिसकी इच्छा हो घर लौट जाय।"

"महाराणा की जय ! हम तिल तिल कट मरेंगे।"

"परन्तु हमें बड़ी भारी सेना से मुठभेड़ करनी है।"

"राजपूत सिंह गीदड़ों से नहीं डरते।"

"चलो फिर वीरो, ब्राह्मण देवता तुम जाकर कुमारी से कहदो कि सन्देश ठिकाने पहुँच गया।"

"जो आज्ञा महाराज।"

(जाता है।)

६

(अरावली की एक तंग घाटी)

"पत्थर, पत्थर, पत्थर।"

"ग़ज़ब, ग़ज़ब, क़हर !"

"मरा, वह कुचला।"

"आह! भागो।"

"किधर भागें? रास्ता बन्द है।"

"पीछे भागो, पीछे।"

"पीछे लौटने की जगह नहीं।"

"ठहरो, पत्थर कहाँ से आरहे हैं?"

"ऊपर पहाड़ की चोटी से बरस रहे हैं।"

"दोनों तरफ़ तङ्ग दर्रा है, हम लोग चूहे-दानी में फँस गये हैं।"

"घबराओ नहीं, ऊपर बन्दूकों का फ़ायर करो।"

"गुड़म-धुम—गुड़म—धुम।"

"पालकी इधर लाओ, यहाँ रखो।"

"या अल्लाह! सौ-सौ मन के पत्थर ऊपर से लुढ़क रहे हैं, घोड़े सवार सब चटनी हो रहे हैं।"

"बहादुरो, दुश्मन बहुत थोड़े हैं, वे पहाड़ पर चढ़कर छिप गये हैं। तोपें सीधी करो, घबराओ नहीं।"

"गुड़म—धुम गुड़म— धुम।"

७

(वही स्थल)

"भाइयो, अब हम कितने बचे हैं?"

"अन्नदाता, कुल चालीस हैं ।"

"शत्रु की सेना पाँच हज़ार है। राजकुमारी की रक्षा हम नहीं कर सकते, परन्तु प्राण दे सकते हैं। वीरो! तलवारें सूँत लो।"

"महाराणा की जय हो!"

[कुमारी आती है।]

"तुम कौन हो ?"

"मैं एक मूर्ख राजपूत-बाला आप को प्रणाम करके एक भिक्षा माँगती हूँ।"

"वह क्या ?"

"महाराज, मैं कुछ एसी राह में पड़ गई हूँ, जो कुलीन स्त्रियों को शोभा नहीं देती, आप मुझे क्षमा कीजिए।"

"कैसी क्षमा कुमारी! मैं अपना धर्म पालन कर रहा हूँ।"

"महाराज, मेरा नाम चञ्चल है, मेरा स्वभाव भी चञ्चल है, मैंने बिना सोचे विचारे आप को पत्र लिखा, अब मेरा विचार दिल्ली जाने का हो गया है। आप लौट जाइये।"

"कुमारी, मुझे तुम्हें रोकने का कोई अधिकार नहीं हैं, पर इस समय यदि मैं तुम्हें जाने दूँ तो मुसलमान कहेंगे, राणा डर गया, अब इस युद्ध के समाप्त होने तक तुम यहीं रहो।

हम केवल चालीस हैं, वे पाँच हज़ार हैं। युद्ध कुछ ही क्षणों में समाप्त हो जायेगा।"

"महाराज, आप एक मूर्ख लड़की की भूल को क्षमा नहीं करेंगे?"

"मैं बीस भूलें क्षमा करूँगा, पर युद्ध के बाद। वीरो! तलवारें सूँतलो।"

"सुनिए महाराज, इस अंगूठी में प्राणान्तक विष है, आप यदि मेरी बात नहीं सुनेंगे तो मैं अभी विष पान करूँगी।"

"वाह राजकुमारी, तुम तो बड़ी अनोखी बालिका हो, क्या तुम नहीं जानती कि क्षत्रिय मरने मारने के समय स्त्रियों का ध्यान नहीं रखते? इस समय तुम हमारी बन्दी हो, हमारे सामने से नहीं जा सकतीं। हम थोड़े हैं, इसलिये युक्ति से लड़ना चाहते थे, परन्तु अब खुल्लमखुल्ला लड़कर जान देंगे; तब तुम्हारी जहाँ इच्छा हो चली जाना।"

"हे वीर! आप धन्य हैं! मैं आपकी अनुगत हूँ। आपको खतरे में देखकर मैंने ऐसा कहा था। आप अपना युक्ति युद्ध कीजिए। मैं तनिक शत्रु-सेना के सरदार से बातें करूँगी। कृपया अपनी तलवार मुझे दीजिए।"

"लो वीरबाला, यह तलवार है।"

[जाती है।]

८

"तुम्हारा सरदार कौन है ?"

"मैं हूँ, मेरा नाम मुबारक है, आप कौन हैं ?"

"मैं रूपनगर की राजकुमारी हूँ ।"

"आपका क्या हुक्म है ? आप हमारी मलिका हैं ।"

"लड़ाई बन्द कर दो, मैं तुम्हारे साथ चलती हूँ।"

"परन्तु राजपूत क्या कहते हैं ।"

"वे तो लड़ेंगे ।"

"उन्होंने हम पर डाका डाला है, मैं उन्हें माफ़ नहीं कर सकता ।"

"मैं हुक्म देती हूँ।"

"मलिका साहेबा, मेरी मजाल नहीं कि आपकी मर्ज़ी के खिलाफ़ कर सकूँ ।"

"राजपूत बहुत कम हैं, और उनके पास केवल तलवारें हैं।

"मगर उन्होंने हमारी एक हज़ार फौज बर्बाद कर दी है।

"वे सब चालीस हैं ।"

"नामुमकिन ।"

"गुड़म-धुम-गुड़म-धुम ।"

"हैं यह तोप कहाँ चली ?"

"हुजूर दुश्मन ने पीछे से हमला किया है ।"

"कितनी फ़ौज है !"

"हजारों सिपाही हैं तोपखाना भी है !"

"मलिका आप कहती थीं वे चालीस हैं।"

"इस नई फ़ौज का भेद मैं नहीं जानती।"

"यह तो दगा हुई।"

"जी हाँ किन्तु जबरदस्ती दूसरेकी बेटी छीन लेना क्या है ?"

"राजकुमारी, मैं आप से बहस नहीं कर सकता आप डोले में बैठिए मैं लड़ूँगा।"

"नहीं नहीं।"

"बहादुरो, पिल पड़ो।"

"मारो।"

"मारो।"

"आह मरा।"

"गुड़म-धुम-गुड़म-धुम।"

६

(युद्ध स्थल)

"तुम कहाँ थे मानिक !"

"दर्बार की सेवा में।"

"दिखलाई तो नहीं पड़े।"

"अन्नदाता, आप ने मुझे घर जाने की आज्ञा दी थी, पर मैंने स्वामी की सेवा करना आवश्यक समझा, मैं रूपनगर जा कर मुग़लवेश में फौज़ के साथ हो लिया। यहाँ घाटी में जब आपने हमला किया तो मैं रूपनगर दौड़ गया। राजा विक्रम से कहा कि डाकुओं ने शाही फ़ौज पर हमला किया है, मदद भेजो। उन्होंने तोपख़ाने समेत दो हज़ार फ़ौज भेज दी मैंने आते हो तोपें दाग़ दीं, दुश्मन हार गये, अब अन्नदाता राजकुमारी जी के साथ उदयपुर पधारें।"

"मानिक, तुम तो काम के आदमी निकले।"

"अन्नदाता, आपके प्राणदान का यह बदला है।"

"तुमने ठीक समय पर सहायता दी।"

१०

(उदयपुर का रंग महल)

"कुमारी, मैंने तुम्हारी इच्छा पूर्ण कर दी, अब तुम रूपनगर जाना चाहती हो या दिल्ली। जहाँ कहो वहीं भेज दूँ।"

"महाराज आप मुझे हर लाए हैं, यह क्षत्रियों की पुरानी रीति है।"

"नहीं, मैंने तुम्हें हरा नहीं शरणागत की रक्षा की है।"

"महाराज, मैं मूर्खा राजधर्म नहीं जानती, पर यदि आप को ऐसी ही बातें करनी थीं, तो आपने दिल्ली जाने से मुझे क्यों रोका था।"

"यह मेरा कर्तव्य था, फिर मैंने तुम्हें वचन दिया था, कि युद्ध समाप्त हो जाने पर मैं तुम्हें न रोकूँगा।"

"धन्य है महाराज, वचन पूरा करने में तो आप एक ही हैं, अन्ततः आप सूर्य-कुल-शिरोमणि हैं।"

"कुमारी सुनो, जब तुमने पत्र भेजकर मुझे बुलाया था तब तुम पर आपत्ति का समय था, ऐसे समय बुद्धि शुद्ध नहीं रहती है, बहुधा मनुष्य ऐसे काम कर बैठता है, कि पीछे पछताना पड़ता है। इसलिये मैं कहता हूँ कि अब तुम सब प्रकार के बन्धन से रहित हो अब जो कहो सो करूँ।"

"महाराज मैं तो आप की शरणागत हूँ।"

"यह तो मेरे कुल के लिए बड़ी प्रतिष्ठा की बात है परन्तु जब तक तुम्हारे पिता प्रसन्नतापूर्वक मेरी मान बड़ाई न करें।" तब तक मैं कुछ नहीं कह सकता।"

"महाराज पिता ने मुझे औरंगजेब के पास भेज दिया; क्या आप मुझे उनका मुँह देखने की आज्ञा देते हैं?

"तब आओ महारानी, मैं इस पृथ्वी पर तुम्हारा पाणि-ग्रहण करता हूँ और अर्द्धाङ्गिनी बनाता हूँ।"

११

(उदयपुर राजसभा)

"अन्नदाता, बड़ी विपत्ति है।"

"ठाकरों विपत्ति राजपूतों का व्यवसाय है।"

"आलमगीर पाँच लाख सेना लेकर स्वयं अजमेर तक आ गया है।"

"कुछ चिन्ता नहीं, शाही फौज का व्यूह क्या है?"

"कुल सेना चार भागों में विभक्त है, शाहज़ादा अकबर पचास हज़ार सेना लेकर दुवारी की ओर आ रहा है, एक लाख सेना लेकर आज़मशाह मध्य में छावनी डाले पड़ा है। उदयसागर पर दो लाख सेना सहित सेनापति दिलेर खाँ कटिबद्ध है। शेष सेना के साथ स्वयं सम्राट आलमगीर अजमेर में छावनी डाले पड़ा है।"

"वीरो, यह मेवाड़ पर अभूतपूर्व चढ़ाई है इतनी सेना मेवाड़ पर कभी नहीं आई थी। हमारी सेना के तीन विभाग होने चाहिएँ; कुमार जयसिंह तुम पश्चिम के नाके पर मुस्तैद रहो।"

"जो आज्ञा पिताजी।"

"और कुँवर भीमसेन तुम पूर्व के नाके को सम्हालो। हम स्वयं नयन से दर्रे में शत्रु से मोर्चा लेंगे!"

"जो आज्ञा दर्बार!"

१२

(अरावली का दुर्गम दर्रा)

"घणी खम्मा अन्नदाता, आलमगीर सब सेना सहित दर्रे में फँस गया है, वह तीन दिन से वहाँ भूखा प्यासा पड़ा है, उसने सन्धि की प्रार्थना की है।"

"कुमार जयसिंह की क्या खबर है?"

"उन्होंने तमाम गुजरात के शाही थाने लूट लिए हैं, वे सूरत तक का देश सर कर चुके हैं।"

"कुमार भीमसिंह?"

"वे दुवारी में अकबर को लताड़ रहे हैं। एक बार पीछे हटकर अकबर अजमेर से और सेना आने की प्रतीक्षा कर रहा है।"

"बादशाह की शर्तें क्या हैं?"

"उन्हें सही सलामत लौट जाने दिया जाय।"

"अच्छा।"

"उदयपुरी बेगम और शाहज़ादी जेबुन्निसा बन्दी हुई हैं। उन्हें छोड़ दिया जाय।"

"अच्छा।"

"बादशाह सब जीते हुए देश लौटा देगा।"

"और ?"

"फिर मेवाड़ पर आक्रमण न करेगा।"

"उसका ऐतबार क्या ?"

"महाराज, इस समय वह बड़ी विपद में है।"

"चञ्चल कुमारी अपने ,कैदियों को छो ़ने को तैयार है ?"

"वे अपना प्रण पूरा कराकर उन्हें छोड़ देंगी।"

"मुझे सन्धि स्वीकार है। मानक, तुम कुमारी से कहो वे बेगम और शाहज़ादी को छोड़ दें।"

१३

(उदयपुर रंगमहल)

"शाहज़ादी जेबुन्निसा, महाराज की बादशाह से सन्धि हो गई है, आप अब जा सकती हैं और आप भी बेगम।"

"शुक्रिया ! महारानी आप की महमाननवाज़ी का शुक्रिया !"

"मगर मैं शुक्रिया अदा न करूँगी।"

"क्यों बेगम साहिबा !"

"मैं बादशाह से कहकर तेरी ज़बान खिंचवा लूँगी।"

"अरे वाह! मैं एक बात तो भूल ही गई, बेगम तुमने मेरे लिये चिलम तो भरी ही नहीं।"

"महारानी, यह क्या?"

"शाहज़ादी आप जा सकती हैं, मगर मलिका साहिबा को मेरी चिलम भरनी ही होगी।"

"मेरी जूती चिलम भरती है।"

"निर्मल, बाँदियों से कह—कि इस बाँदी के कान पकड़ कर इसे चिलम भरना सिखावें।"

"महारानी, बेगम बादशाह की मलिका हैं, उनकी इज्ज़त का ख़याल रखिये।"

"शाहज़ादी, हर एक शख़्स को अपनी इज्ज़त का ख़ुद ख़याल रखना चाहिए।"

"उठो बेगम, चिलम भरो।"

"हाय मेरी किस्मत!"

"उठो, उठो, नख़रे न करो!"

"अफ़सोस, दिल्ली का महल न हुआ!"

"जल्दी उठती हो, या कान पकड़ कर खींचे जायँ।"

"मैं चिलम भरना नहीं जानती।"

"हम सिखा देती हैं, चिलम हाथ में लो।"

(बेगम चिलम भरकर चँचल के सामने लाती है।)

"हाँ ,अब ठीक हुआ, तुमने चिलम भरवाने का इरादा किया था, परन्तु मैं उसे भुला गई थी, अब तुम्हारी घमण्ड की बातों के कारण चिलम भरवानी पड़ी। जाओ आलमगीर को फिर सिखा कर लाना।"

(सब जाते हैं)

हाड़ी रानी

१

"सब सरदारों की क्या इच्छा है ?"

"अन्नदाता हम निर्णयात्मक युद्ध करेंगे !"

"किन्तु हम बहुत कम हैं सैनिक तैयारियों का अब समय नहीं।"

"घणी खम्मा, अन्नदाता—हमें बिजली की भाँति टूट कर तुर्त फुर्त शत्रु को छिन्न भिन्न कर देना चाहिये।"

"यह तो हो सकेगा, परन्तु जब बादशाह को समाचार

पहुँचेगा, वह चुप न बैठेगा, आँधी की तरह दौड़ेगा।"

"तब तक तो, अन्नदाता, हम सुरक्षित लौट आवेंगे, यहाँ उसका दल-बल देख लिया जायगा।"

"अच्छा, और यदि न लौट सके? मार्ग ही में घेर लिये गये?"

"अन्नदाता, एक युक्ति मेरी समझ में आ रही है।"

"कौन सी युक्ति, वीर चूड़ावत?"

"आप यहाँ से सीधे शत्रु पर आक्रमण करें! हम में से एक वीर सावन्त उदयपुर जाकर समस्त सेना ले दिल्ली और मेवाड़ के मुहाने पर आलमगीर का मार्ग रोक कर बैठ जाय और उसे आगे बढ़ने ही न दे।"

"युक्ति तो उत्तम है, पर कौन वीर यह साहस करेगा?"

"यदि आज्ञा हो तो यह सेवक.........."

"वीर चूड़ावत, तुम्हें मैं यह साहस न करने दूंगा, अभी तुम्हारी आयु ही क्या है। तुम्हारे पिता ने राज्य की सेवा में प्राण दिये, तुमने तो अभी ब्याह किया है। वधू की मेंहदी भी फीकी नहीं हुई। नहीं, यह न होगा।"

"अन्नदाता, सेवकों का धर्म ही राज्य-सेवा में सर्वस्व देना है।"

"परन्तु वीर-शिरोमणि, इस मोर्चे से लौटना कठिन है।"

"स्वामी, यह प्राण तो आप ही के हैं।"

"सरदारों, आपकी क्या सम्मति है ?"

"जय, वीर चूड़ावत की जय ! चूड़ावत ने अपने वंश की मर्य्यादा के अनुरूप ही कहा है। आप आज्ञा दीजिये।"

"वीरवर, कैसे कहूँ ?"

"जय ! मेवाड़पति-हिन्दू-कुल-सूर्य्य की जय हो ! अन्न-दाता, एक एक क्षण बहुमूल्य है, अब आप का मार्ग वह है और मेरा यह। महाराज मैं प्रण करता हूँ कि जब तक अभीष्ट सिद्ध न हो लेगा। मैं आलमगीर को एक तिल भी आगे न बढ़ने दूँगा।"

"धन्य वीर ! अच्छा, तो बिदा।"

"जुहार, ठाकराँ !"

"जुहार ! जुहार !! हम में से बहुत उस लोक में शीघ्र मिलेंगे।"

"अवश्य मिलेंगे ठाकराँ।"

(हाड़ी रानी का महल)

"स्वामिन्, इतनी उदासी क्यों ? आज आप का सूर्य्य के समान चमकता हुआ मुखारविन्द बुझा हुआ अङ्गारा सा प्रतीत हो रहा है।"

"कुछ नहीं प्रिये, जहाँ तुम हो वहाँ आनन्द और स्वर्ग है।"

"नहीं स्वामी, दासी को सत्य बात बताइये।"

"रानी, क्या कहूँ ?"

"कहिये प्राणनाथ !"

"कहने योग्य बात नहीं प्रिये।"

"ऐसी कौनसी दुनिया में बातें हैं, जो पति पत्नी में कहने योग्य न हों ? कहिए स्वामी।"

"एक बड़ी उलझन आई है।"

"राजपूत के लिये वह साधारण बात है। क्या मेरे स्वामी किसी उलझन से घबराए हुए हैं ?"

"नहीं प्रिये, पर बात कुछ ऐसी ही है।"

"कहिए तो प्राणधन।"

"महाराज एक मुहिम पर गए हैं। उनके साथ बहुत कम सैनिक हैं उधर आलमगीर दलबल सहित चढ़े आ रहा है। उसे रोकने के लिये यह निश्चय किया है, कि मैं दिल्ली और मेवाड़ के बीच के मार्ग में बीस हजार सैनिक लेकर आलमगीर की राह को रोकूँ। इस बीच में श्री महाराणा अपना कार्य करके सकुशल उदयपुर लौट आवेंगे।"

"बड़ी अच्छी युक्ति है स्वामी।"

"सो मुझे इस मोर्चे पर लोहा लेने जाना ही होगा।"

"धन्य भाग मेरे, जो मेरे स्वामी ऐसे यश-लाभ को जा रहे हैं।"

"परन्तु प्रिये········"

"क्या—स्वामी ?"

"इस युद्ध से पीछे लौटना न होगा।"

"नाथ, क्या उदयपुर में क्षत्रिय-गण युद्ध में जाते समय अपनी स्त्रियों से ऐसी ही चर्चा किया करते हैं ?"

"प्रिये, मैं कायर नहीं, मुझे मृत्यु का भय भी नहीं।"

"यही मैंने समझा था स्वामी।"

"मैं हँस हँस कर तिल तिल कटना जानता हूँ।"

"तब यह हृदय दौर्बल्य क्यों ?"

"कैसे कहूँ ?"

"कहो स्वामी।"

"तुम्हें छोड़ कर जाते छाती फटती है।"

"छाती फटती है ?"

"अभी तुम्हें ब्याह कर आए पन्द्रह दिन भी नहीं हुए।"

"मेरा स्त्रीत्व तो आपके छूते ही सफल हो चुका स्वामी।"

"परन्तु प्रिये·····"

"और आपकी शुभ दृष्टि पड़ते ही मैं सौभाग्यवती हो उठी। नारी जीवन का सर्वस्व तो मैं पा चुकी।"

" परन्तु प्रिये, जीवन का मध्य भाग यौवन है, यौवन में जीवन सूर्य का अस्त होना बिल्कुल असह्य है।"

"महाराज, हमारे जीवन का सर्वोपरि पदार्थ तो हमारा क्षत्रित्व है क्षत्रिय धर्म के लिये हमारा यौवन कौमार्य और वैभव है।"

"यह सच है प्रिये, फिर भी मेरा मन तुम में अनुरक्त है।"

"स्वामी, एक पत्नी के लिये यह एक गर्व की बात है परन्तु क्षत्राणी के लिये नहीं।"

"क्यों देवी ?"

"क्षत्रिय लोग स्त्रियों में रत नहीं होते, उनका जीवन उत्सर्ग और त्याग के लिये होता है, वे देश के रक्षक, देश के बाहु, देश के उद्धारक होते हैं।"

"क्या उनका हाड़ माँस का शरीर नहीं होता ?"

स्वामी, इस नश्वर शरीर की महान् क्षत्रिय-धर्म से क्या समता है ! जो उस समय तक जीवित रहता है जब तक कि सर्य चन्द्र स्थिर हैं।"

"क्या कहूँ प्रिये ? मन अधीर होता है।"

"स्वामी, आपकी इस बात से मुझे अत्यन्त लाज आती है।"

"तुम्हारे सुहाग का कङ्कण भी नहीं खुला, हाय, कैसे मैं तुम्हें

छोड़ कर जाऊँ ?"

"स्वामी !"

"प्रिये, क्रोध न करो।"

"स्वामी, आप क्षत्रिय हैं ?"

"हाँ, रानी।"

"क्षत्रिय-पुत्र हैं ?"

"हाँ, रानी।"

"क्षत्रिय माता पिता की सन्तान हैं ?"

"हूँ तो प्रिये।"

"तो प्रसन्नचित्त युद्ध-क्षेत्र में जाइये।"

"जाऊँगा प्रिये, तुमसी वीराङ्गना पाकर मैं कृतार्थ होगया।"

(मेवाड़ी सेना)

"दुर्जन !"

"हाँ महाराज।"

"सेना तैयार है ?"

"जी हाँ।"

"मेरा घोड़ा ?"

"तैयार है श्रीमान्।"

"अच्छा, मेरे हथियार, जिरह-बख्तर लाओ।"

"जो आज्ञा, श्रीमहाराज।"

"और सुनो।"

"श्रीमहाराज।"

"हाड़ी रानी से कहा था?"

"कहा था महाराज।"

"क्या कहा था?"

"महाराज का सन्देश—कि वे अपने कर्त्तव्य का ध्यान रखें।"

"उन्हों ने क्या कहा?"

"कहा—महाराज, मैं भी क्षत्राणी हूँ क्षत्राणियों की कुल-कान जानती हूँ। आप निर्भय युद्ध में जायँ, क्षत्राणी अपना कर्त्तव्य पूरा करेगी।"

"दुर्जन!"

"महाराज।"

"यह कोलाहल कैसा है?"

"महाराज, सेना जयनाद कर रही है। घोड़े हिनहिना रहे हैं हाथी चिंघाड़ रहे हैं।"

"दुर्जन!"

"श्रीमहाराज।"

"तुम फिर हाड़ी रानी के निकट जाओ।"

"जो आज्ञा महाराज।"

"उनसे कहो कि वे अन्तिम समय में अपना कर्तव्य न भूलें।"

"जो आज्ञा महाराज!"

(हाड़ी रानी का महल)

"घणी खम्मा, अन्नदाता, बाई जी राज, श्री महाराज की इच्छा है, कि बाई जी राज अपना अन्तिम कर्तव्य……"

"अभी तक उन्हें द्विविधा है!"

"बाई जी राज, महाराज बड़े चिन्तित हैं।"

"वे क्या कर रहे हैं?"

"शस्त्र धारण किये बेचैनी से टहल रहे हैं।"

"सवार नहीं हुए?"

"अभी नहीं राज।"

"सेना तैयार खड़ी है?"

"जी हाँ।"

"और महाराज अभी टहल रहे हैं।"

"अन्नदाता……"

"ठहरो, उन्हें द्विविधा है?"

"वे चिन्तित हैं।"

"ठाकराँ ।"

"बाई जी राज।"

"तुम्हारी तलवार की धार कैसी है ?"

"बहुत चोखी, राज।"

"देखूँ तो तनिक, ठाकराँ, अपनी तलवार मुझे देना।"

"लीजिये राज।"

"मैं तुम्हें अपना सिर देती हूँ, इसे महाराज को देकर कहना कि अब निश्चिन्त होकर युद्ध को प्रस्थान करें।"

"अन्नदाता, यह.........?"

(रानी अपना सिर काट देती है। दुर्जनसिंह लपककर सिर लेता है।)

५

(मेवाड़ी सेना)

"दुर्जन !"

"घणी खम्मा महाराज, दुहाई।"

"क्या हुआ दुर्जन ?"

"रानी जी ने अपना सीस आपके अर्पण किया है !"

"रानी ने ?"

"यह लीजिये महाराज !"

"यह क्या हुआ ?"

"महाराज, जब रानी ने देखा कि महाराज को उनकी स्मृति कर्त्तव्य विमुख कर रही है तो उन्होंने यह साखा रचा।"

"पति के जीवित ही उस सती ने साखा रच दिया ?"

"श्रीमान्, क्षत्राणी आपकी अधिक द्विविधा न देख सकीं।"

"दुर्जन।"

"श्रीमहाराज !"

"अच्छी बात है तब।"

(सिर को केशों के बल गले में लटका लेता है।)

"दुर्जन !"

"श्रीमहाराज।"

"तलवार लेलो।"

"तलवार मेरे पास में है स्वामी।"

"घोड़ा लाओ।"

"घोड़ा उपस्थित है महाराज।"

"चलो—कूच, बोलदो, नक्कारे पर चोब पड़ने दो, धौंसा बजने दो।"

"जो आज्ञा स्वामी।"

६

(अरावली उपत्यका)

"जय श्रीएकलिङ्ग !"

"जय हिन्दूपति-सूर्य्य महाराणा की !"

"जय वीर चूड़ावत् !"

"जय सती हाड़ी रानी !"

"जय !"

"जय !"

"जय !"

"वीरो ! आज हम एक बड़े महान् कार्य के लिये जा रहे हैं।"

"जय चूड़ावत् सरदार !"

"हमारा काम जोखिम से परिपूर्ण है।"

"हमें उसकी चिन्ता नहीं।"

"हमें लौट आने की आशा नहीं।"

"हम हर्ष से प्राण त्यागेंगे।"

"वीरों ! मेवाड़ की प्रतिष्ठा तुम्हारे हाथ है।"

"जय मेवाड़।"

"जय श्रीएकलिंग।"

"जय महराणा हिन्दू-सूर्य !"

"जय हाड़ी रानी-सती !"

"वीरो, जिसे प्राणों का मोह हो, वह घर रहे।"

"ऐसा एक भी कायर नहीं है।"

"तब चलो वीरो।"

"चलो !"

"चलो !"

"जय मेवाड़ !"

"जय श्रीएकलिंग !"

"जय सीसौदिया वंश।"

"जय वीर चूड़ावत् !"

"जय सती हाड़ी !"

७

(मेवाड़ दिल्ली की सीमा)

"रास्ता छोड़ दे, ऐ बदबख्त, शाहनशाह आलमगीर फ़िल-हाल उदयपुर पर चढ़ाई नहीं कर रहे हैं।"

"ज़बरदस्ती हमें धकेल कर चले जाओ। खाँ साहेब, हमारा इरादा हटने का नहीं है।"

"क्यों नाहक जान का गाहक बना है ?"

"यह तो हमारा धन्धा है।"

"खुदा की कसम, तेरी जवानी पर तरस आता है ? हटजा पीछे, आलमगीर के गजब में न पड़।"

"यह गीदड़ भभकी अपने किराए के सिपाहियों को दो ख़ान।"

"तो मैं शहंशाह से अर्ज कर दूँ ?"

"करदो।"

"कि—बदबख्त उदयपुर का एक सरदार शाही गजब में गिरा चाहता है।"

"और शहनशाहे देहली को राजपूती शमशीर का जौहर दिखाना चाहता है।"

"याद रखो—जल्द तुम सब काफ़िर दोज़ख की आग में डाल दिए जाओगे।"

"थोड़ी ही देर में वहाँ का इन्तज़ाम करने तुम्हें भेज दिया जायगा।"

८

(मुगल छावनी)

"कौन है यह पाजी ?"

"उदयपुर का एक सरदार है।"

"इसकी इतनी हिम्मत ?"

"जहाँपनाह, वह एक अनोखा आदमी है।"

"अनोखा आदमी है ?"

"हुजूर, उसके गले में एक औरत का कटा हुआ सिर लटक रहा है।"

"सिर लटक रहा है ?"

"जी हाँ खुदावन्द, वह शायद मरने को तैयार होकर आया है। उसकी आँखों से आग बरस रही है।"

"आग बरस रही है ?"

"हुजूर......"

"दिलेर खाँ !"

"हुजूर !"

"फ़ौज को हमला करने का हुक्म दे दो।"

"जो हुक्म !"

"मैं खुद हाथी पर फ़ौज के आगे रहूँगा।"

"जो हुक्म !"

"उस पाजी दोज़खी गुस्ताख़ काफ़िर को देखूँगा।"

"जहाँपनाह......"

"जाओ...फ़ौरन हमला......"

६

(उदयपुर का राजमहल)

"तो वीरवर चूड़ावत काम आए ?"

"अन्नदाता, वे अमर हुए।"

"आह, मेवाड़ सूना हो गया।"

"घणी खम्मा अन्नदाता।"

"सरदारो, कहो वीर ने कैसे प्राण त्यागे ?"

"स्वामी, हाड़ी रानी ने उन्हें अपना सिर काटकर पहले ही भेंट कर दिया था।"

"धन्य वीरबाला ! उसने सोचा—वीर पति का मन पत्नि में लगा है, उसने तत्काल अपना सिर काट कर पति के भेंट कर दिया। अभी उसके ब्याह की मँहदी भी फीकी न पड़ी थी, सुहाग की चुनरी भी मैली न हुई थी, ब्याह का कङ्गना भी न खुला था। हायरे कठोर क्षत्रिय व्रत !"

"अन्नदाता, वीरवर चूड़ावत ने आलमगीर के दाँत खट्टे कर दिये।"

"ठाकराँ, वीर की वीरता का कुछ बयान करो।"

"स्वामी चूड़ावत ने वीरता की हद कर दी, उन्होंने मुगलों की सेना को चीर कर आलमगीर के हाथी पर घोड़े को जा उड़ाया, और आलमगीर को अपने काल रूपी भाले का लक्ष्य

किया, परन्तु आलमगीर भाग्य से बच गया। वीर ने जब दूसरा भाला ताना तो आलमगीर ने हाथ उठा कर जाँ बख्शी माँगी। तब वीरवर ने दस वर्ष तक उदयपुर पर आक्रमण न करने की कसम लेकर घोड़ा फेरा। असंख्य घावों से वीर का शरीर पहले ही से छिन्न-भिन्न हो गया था। बादशाह से प्रतिज्ञा लेकर लौटते ही वीर वीर-गति को प्राप्त हुए।"

"धन्य वीर! धन्य वीर!! धन्य रानी हाड़ी!!! धन्य-धन्य धन्य!!!"

पन्ना धाय

(वीर शिरोमणि राणा सांगा की मृत्यु के बाद सनकी कायर विक्रमादित्य मेवाड़ की राजगद्दी पर बैठा, उसने सब सरदारों को असन्तुष्ट कर दिया उसे पृथ्वीराज के दासीपुत्र बनवीर ने रात में तलवार के घाट उतार दिया। तथा उसके शिशु कुमार उदयसिंह को भी मार डालने की चेष्टा की पर पन्नाधाय और किसना नाई ने उन्हें बचा लिया तथा पन्ना ने अपने पुत्र की बलि दी।"

१

"महाराज हम सब सरदार आपको महाराणा स्वीकार करते हैं।"

"यह तो बहुत ही अच्छी बात है हमको मंजूर है ?"

"परन्तु महाराज आपको इस पद की मर्यादा की रक्षा करनी पड़ेगी।"

"वह हम करेंगे।"

"आपकी अपनी सब पिछली आदतें छोड़ देनी पड़ेंगी।"

"हम छोड़ देंगे।"

"सरदारों की सोहबत में रहना होगा।"

"हाँ; हाँ, हम समझ गये।"

"तो हम आपके राजतिलक की तैयारी करें।"

"कीजिए न।"

"यद्यपि स्वर्गीय महाराणा ने आपको गोद नहीं लिया था परन्तु हम आप ही को उपयुक्त समझते हैं।"

"ठीक करते हैं आप।"

"तो आप वचन दीजिए, कि आप मेवाड़ के लिये तन-मन वारेंगे।"

"दिया वचन।"

"सीसोदिया वंश का नाम ऊँचा करेंगे ही।"

"सो तो करेंगे।"

"युद्ध में कभी पैर पीछे न डालेंगे।"

"नहीं नहीं, कभी नहीं।"

"चित्तौड़ के उद्धार के लिये सब कुछ करेंगे ।"

"करेंगे जी, अवश्य करेंगे ।"

"तो अब से आप हमारे महाराणा हैं ।"

"हुई हैं ।"

"हिन्दू-कुल-सूर्य ।"

"हाँ-हाँ, हिन्दू-कुल-सूर्य ।"

"अब सरदार कहो—महाराणा की जय !"

"महाराणा की जय !"

"महाराणा विक्रमादित्य की जय !"

"महाराणा विक्रमादित्य की जय !"

२

[सर्दारों की मन्त्रणा]

"यह तो हम से बड़ी चूक हुई ।"

"निसन्देह, यह पागलयुवक—भला महाराणा होने के योग्य है ।"

"दिन रात लफंगों की सोहबत में डूबा रहता है ।"

"बड़े बड़े सर्दारों का अपमान करता है ।"

"सात हजार पहलवान इकट्ठे कर रखे हैं उनका क्या होगा ? वे दर्बार में डटे रहते हैं ।"

"ऐसी दशा में हम जैसे सर्दारों का वहां क्या काम है ?"

"कुछ काम नहीं है, हमें तुरन्त यहाँ से चल देना चाहिए।"

"अवश्य, अपने अपने ठिकानों को लौट चलना चाहिए।"

"हम कभी अपना अपमान नहीं सहन कर सकते।"

"प्राण रहते कभी नहीं।"

तो हम प्रतिज्ञा करें कि जबतक दरबारी नियम व्यवस्था ठीक नहीं होती, हम दर्बार में उपस्थित नहीं होंगे।"

"हम प्रतिज्ञा करते हैं।"

२

(उदयपुर राज दर्बार)

'श्रीमान्, सब सरदारगण अपने अपने ठिकाने को लौट गए।"

"अच्छा हुआ, हर बात में अड़ँगा लगाते थे, कहो, राणा मैं हूँ या वे ?"

"अन्नदाता आप।"

"बस तो।"

"अन्नदाता की जय !"

"सब झगड़े की जड़ तो नरसिंहदेव है, कैसा भैंसा सा फूला है।"

"और मदेनीराय को नहीं देखा ? दो दो तलवारें बाँधता है।"

"अन्नदाता, हुक्म दें तो एक पेंच में पछाड़ दूँ।"

"इसमें क्या संदेह। दो दो तलवारें बांधना और बात है और पहलवानी करना और बात है।"

"पहलवानी की क्या बात है।"

"अन्नदाता के दरबार में एक से एक बढ़ कर सात हज़ार पहलवान हैं।"

"मेरे किसी पहलवान से कोई सरदार मुक़ाबला कर सकता है ?"

"नहीं अन्नदाता, पहलवान पहलवान है।"

"परन्तु........."

"परन्तु क्या ? कहो........."

"अन्नदाता, गुजरात के सुल्तान ने चित्तौड़ पर मुहम्मद खाँ आसारी को भेजा है।"

"कितनी फौज होगी उसके साथ ?"

"कोई साठ हज़ार, तोपखाना भी है।"

"मेरे यहाँ कितने पहलवान हैं ?"

"सात हज़ार।"

"ओह बहुत हैं।"

"घणी खम्मा, हुक्म हो तो फौज को काई सी फाड़ दें, तोपों को धकेल कर उनका मुँह दुश्मन की ओर कर दें।"

"भई वाह, क्या बात कही है।"

(हँसते हैं)

४

(राणा की गुप्त बैठक)

"कौन हो तुम ?"

"मेरा नाम बनवीर है।"

"नाम सुना है, तुम कुँवर पृथ्वीसिंह के पासवानिया हो ?"

"मैं उन्हीं प्रसिद्ध वीर का पुत्र हूँ।"

"हाँ-हाँ, परन्तु भाई, रानी के पेट से तो नहीं हो न ?"

"परन्तु महाराज पृथ्वीसिंह......"

"समझ गया, वे तो प्रसिद्ध वीर थे, सुना था—"

"उनके तेज और प्रताप के कारनामे घर-घर गाये जाते हैं।"

"तुम भी कुछ वीर हो भाई ?"

"मैं अपने पिता ही की भाँति वीर हूँ।"

"मुझे आज-कल वीरों की बड़ी आवश्यकता है, तब तुम मेरे दर्बार में रहो।"

"मैं अन्नदाता से यही चाहता हूँ।"

"हाँ-हाँ, रहो भाई, पर वीरता दिखानी होगी ; मेरे किसी पहलवान से लड़ सकते हो ?"

"महाराज, राजपूत तलवार लेकर शत्रु से युद्धक्षेत्र में लड़ते हैं, पहलवानी नहीं करते।"

"हा-हा-हा ! हम तो जानते ही हैं कि यह टेढ़ी खीर है।"

(एक पहलवान)

"परन्तु महाराज, ये राजपूत कब से हुए ! ये तो पासवानिये........"

"क्या मेरा अपमान-- (तलवार खींचता है)

"ठहरो-ठहरो भाई, लड़ो मत, जो वीर हो वही राजपूत।"

"महाराज, मैं लाखों में तलवार चलाऊँ तो बात।"

"तो तुम आज से मेरे सरदार हुए।"

"जय हो अन्नदाता।"

५

(राणा का शयनागार)

"पहरेदार !"

"अन्नदाता।"

"आज रात बहुत अंधेरी है।"

"हाँ महाराज।"

"होशियार रहना।"

"जो आज्ञा, अन्नदाता।"

"यह शब्द कैसा है।"

"हवा वेग से चल रही है, महाराज।"

"कुछ भय तो नहीं।"

"नहीं।"

"तुम्हारी तलवार है?"

"है, महाराज।"

"खबरदार रहना।"

"महाराज बेखटके आराम करें सेवक खूब सावधान है।"

"मैं तुझे सवेरे इनाम दूँगा।"

"सेवक आपका ही खाता है।"

"पहरेदार।"

"श्री महाराज।"

"तू पहलवानी जानता है।"

"नहीं स्वामी।"

"तब तो तू दो कौड़ी का आदमी है।"

"सेवक तो महाराज का दास है।"

"तलवार चला सकता है।"

"अन्नदाता, एक हाथ में दो टूक करदूँ।"

"खैर, यह भी अच्छा है, परन्तु सुन तो..........."

"श्रीमहाराज।"

"तलवार बनवीर भी खू.ब चला सकता है ?"

"हाँ अन्नदाता ।"

"अच्छा होशियार रहना । मैं सोऊँ ?"

"आरामसे सोइये महाराज ।"

६

(राणा का शयनागार-बनवीर का प्रवेश)

"कौन ।"

"चुप ।"

"आप !"

"चुप, इधर देख ।"

"मोतियों की माला ।"

"लाख रुपये का माल है समझा ।"

"जी हाँ श्रीमान् ।"

"सम्हाल कर रखले, राणाजी कहाँ सोते हैं ?"

"राणा ! श्रीमान् आपका मतलब........."

"चुप, ले यह पन्ने की कण्ठा, पचास हजार का है, मैं जरा महाराज को देखना चाहता हूँ, वे......"

"नहीं, श्रीमान् आपका विचार क्या है ?"

"मूर्ख, सात पीढ़ियों के लिये यह धन बहुत है ।"

"परन्तु...."

"चुप, मैं देखना चाहता हूँ, कौनसे दालान में है।"

"श्रीमान्..."

"चुप रह, मैं अपने सेवकों को जैसा इनाम देता हूँ वैसा ही विरोधियों को दण्ड भी।"

"परन्तु महाराज मुझे प्राण देना स्वीकार है। किन्तु..."

"तो ले।"

"कटार पेट में घुसेड़ देता है, पहरेदार मर कर गिर जाता है)

७

(राणा का शयनागार)

"कौन हो तुम ? पहरेदार........"

"मैं बनवीर हूँ।"

"भई वाह, सेवक हो तो ऐसा, रात भर चुपचाप पहरा बहुत देते हो, हम संतुष्ट हुए।"

"परन्तु महाराणा—अब समय नहीं है।"

"समय नहीं है ?"

"जी हाँ।"

"समय क्यों नहीं है, क्या दिन निकल आया ।"

"अभी नहीं, परन्तु आप तैयार हो जाइये ।"

"अरे, यह क्या—यह क्या—कटार—अरे नहीं ।"

"मरो राणा ।"

"अरे नहीं बनवीर ।"

"मैं पासवानिया हूँ ।"

"नहीं—बनवीर ।"

"मैं आज से मेवाड़ का राणा हूँ । गद्दी मेरी है ।"

"गद्दी ले लो पर मुझे छोड़ दो ।"

"तुझे मरना होगा कीड़े । उस दिन तू हँसा था ।"

"मुझे बख्श दो बनवीर ।"

"मर ।"

"नहीं ।"

"मर ।"

"आ—हा.........।"

(कटार घुसेड़ कर भाग जाता है)

८

(कुमार उदयसिंह का शयनागार)

"कुशल तो है किसन, इतना क्यों घबरा रहे हो ?"

"चुप, कुशल नहीं है ।"

"क्या कहते हो किसन ?"

"कुमार कहाँ है ?"

"वह सो रहे हैं पलङ्ग पर ।"

"और लल्लू ?"

"वह कुमार के चरणों में—देखो, कैसा लगता है । क्यों किसन, मेरा लल्लू क्या राजकुमार से कम है ? कैसा..."

"चुप रहो, बड़ी भयानक बात है ।"

"कैसी बात ?"

"धीरे, बनवीर ने महाराज विक्रमादित्य को मार डाला ।"

"महाराज विक्रमादित्य को मार डाला ?"

"हाँ, और वह हत्यारा कुँवर की ताक में इधर ही आ रहा है ।"

"क्या कहते हो किसन ?"

"कुमार को बचाना होगा, पन्ना मा ।"

"कुमार को बचा दो किसन ।"

"उस टोकरी में क्या है ?"

"कुछ नहीं—थोड़ी तरकारी है ।"

"उसमें चुपचाप कुँवर को लिटा दो । सुनो किसके पैर की आहट है ?"

"वही आ रहा है, जल्दी ।"

"हे परमेश्वर ! कुमार जाग न उठे ।"

"जल्दी करो, ऊपर कपड़ा ढाँप दो ।"

"किसन कुँवर जाग न उठे ।"

"चुप, घास कूड़ा ऊपर डाल दो, हाँ अब ठीक हुआ ।"

"वह सीढ़ी चढ़ रहा है किसन ।"

"लल्लू को वहाँ पलङ्ग पर सुलादो ।"

"लल्लू को ?"

"मोह का समय नहीं पन्ना मा ।"

"समझ गई । तो फिर—मेरा बेटा राज ......"

"चुप, वह द्वार खड़खड़ा रहा है ।"

"खोल दूँ ?"

"नहीं, ठहरो, लल्लू हँस रहा है ।"

"वह कोई अच्छा सुपना देख रहा है ।"

"चुप, वह द्वार पर लातें मार रहा है ।"

"खोल दूँ ?"

"ना, हाँ, ठहरो, मैं खोलता हूँ ।"

(द्वार खोलकर बकता झकता बाहर आता है ।)

९

(किसन सेवक और बनवीर)

"भाड़ में जाय नौकरी—रात को चैन न दिन को— मैं कल ही घर जाऊँगा।"

"खड़ा रह, कौन है तू?"

"हम हैं गरीब आदमी सिपाही जी, भला यह भी कोई उठने का समय है, हुकम चलाना।"

"यहाँ मत बड़बड़ा, दूर हो पाजी।"

"अजी सिपाही जी..."

"दूर हो पाजी।"

१०

(कुमार का शयनागार)

"कुंवर कहाँ है?"

"वे सो रहे हैं, प्रभु।"

"कहाँ, जल्द बता?"

"महाराज, वे सो रहे हैं।"

"कहाँ, कहाँ?"

"वे हैं, आह! उधर न जाइये।"

"दूर हो, मैं इसका काल हूँ।"

"ईश्वर के लिये बालक पर दया कीजिये।"

"परे हो, दूर हो, पैर छोड़।"

"महाराज, दया।"

"दूर हो चुड़ैल।"

"आह!"

(कटार छाती में घुसेड़ देता है)

भयानक चीत्कार। (बालक को मार कर बनवीर भाग जाता है)

११

(पन्नाधाय और सरदार)

"धन्य पन्ना, तैंने अपना पुत्र बलि दिया।"

"रावत जी, वह मेरे नयनों का तारा था, पापी ने उसके कलेजे में कटार भोंक दी।"

"तैंने मेवाड़ का राजवंश बचा लिया।"

"महाराज, मैंने राणा का नमक खाया था।"

"तू सकुशल यहाँ कैसे पहुँची पन्ना ?"

"बड़ी कठिनाई से।"

"कहो, कैसे ?"

"किसना कुँवर को छिपा कर ले गया, पीछे पुत्र के लिये

सन्तोष करके मैं देवलिये रावत रायसिंह जी की शरण में पहुँची, उन्होंने बनबीर के भय से हमें नहीं रक्खा, सवारी देकर डूँगरपुर भेज दिया, वहाँ के रावल आसकरण जी ने भी आश्रय नहीं दिया, हाँ घोड़ा और राह खर्च देकर विदा कर दिया, अब मैं आप की शरण हूँ। यहाँ कुम्भलमेर आते आते मैंने बड़े कष्ट पाए हैं।"

"धन्य हो-पन्ना, महाराणा साँगा ने मेरे ऊपर बड़े उपकार किये हैं, और उनके बढ़ाए मैं बढ़ा हूँ, अब चाहे भी जो हो, निर्भय यहाँ रहो, मैं जो विपता मुझ पर पड़ेगी, भोगूँगा।"

रूठी रानी

१

(अब से पौने चार सौ वर्ष पहिले जैसलमेर के रावल लूनकरण को एक पुत्री का जन्म हुआ। उसके जन्म लेने से राजपूताने में हलचल मच गई। जैसलमेर की सुन्दरियाँ उन दिनों जगद्विख्यात थीं; पर लूनकरण की यह बेटी उन सब में अलौकिक थी। ज्यों २ वह शशि कला बढ़ती गई, उसके सौन्दर्य्य की धूम मचती ही गई। देखते देखते राजपूताने भर के राजाओं ने उसकी याचना की, सखियाँ सोचती थीं देखें, किस भाग्यवान को यह अछूता पुष्प लाभ होता है। कुमारी का नाम उमा था,

सखियाँ बड़े २ राजकुमारों के रूप गुण का बखान कर उसके मन की थाह लेती थीं, पर वह अपने रूप के नशे में किसी को कुछ गिनती ही न थी। उसकी हठ निराली थी; तथा साहस और आत्मसम्मान का भाव बेढब था। संसार से निराला उसका स्वभाव था, वह छुईमुई थी। उङ्गली दिखाई और वह मुर्झाई। जब वह सयानी हुई, तो माता पिता को उसके ब्याह की चिन्ता हुई ।)

२

(जैसलमेर के राव का अंतःपुर)

"महाराज, आप बेसुध बैठे हैं, उमा सयानी होगई। उसके हाथ पीले करने की चिन्ता कीजिए। बेटी बाप के घर नहीं खपती।"

"मुझे भी ध्यान है, पर चिन्ता क्या है? राजा लोगों में चर्चा हो रही है, साँझ सवेरे कहीं न कहीं से काम हो ही जायगा। उमा को माँगते तो सब हैं पर उसके स्वभाव से डरता हूँ–पराये घर कैसे निभेगी ?"

"आप भी तो अपनी ओर से किसी को लिखिए?"

"मैं जिसे लिखूँगा उसका मिजाज़ आकाश पर चढ़ जायगा। मैं भी तो रजपूत हूँ, किसी का घमण्ड नहीं देख सकता।"

"सो तो ठीक है, पर जब बेटी जन्मी है, तो किसी को दामाद तो बनाना ही पड़ेगा।"

"पड़ेगा तो, सोच रहा हूँ। हाँ, मारवाड़ के राव मालदेव ने भी पत्र भेजा है।"

"मालदेव ने क्या लिखा है?"

"लिखा है आपका हमारा सम्बन्ध ठेठ से चला आता है कुछ नई बात नहीं है।"

"तो हानि क्या है! घर-वर दोनों अच्छे हैं।"

"खाक अच्छे हैं, मेरा सारा देश लूट-पाट कर उजाड़ दिया, अब बेटी माँगता है।"

"बेटी तो देनी ही है, मालदेव ही को दो, जिससे दुश्मनी तो मिटे।"

(स्वगत) बात तो सच है, घर बैठे शिकार फँसने का अवसर है, चूकना न चाहिये।"

"क्या सोचने लगे?"

"कुछ नहीं, मैं सोचता हूँ कि तुम्हारी बात ठीक है, राव मालदेव से कर देना चाहिये।"

"तो आज ही सोने चाँदी के नारियल का टीका भेज दीजिये।"

"मैं अभी पुरोहित को बुलाता हूँ, सब प्रबन्ध हो जायगा।"

३

(रावल जी का महल)

"क्या बारात द्वार पर आगई ? तोरण बँधाने की तय्यारी करिये महाराज।"

"करता हूँ रानी, तनिक झरोखे से दूल्हे को तो देखो, यही है वह जिसके डर से मुझे रात को नींद नहीं आती, अब यह मेरे द्वार पर तोरण बाँधेगा, अहा हा ! मेरे उसी द्वार पर तोरण बाँधेगा जो बहुधा उसी के भय से बन्द रहता है, पर देखती रहो, मैं भी क्या करता हूँ। जो चौरी में से जीता निकल गया, तो मैं रावल नहीं। बेटी तो विधवा होगी पर दिल का काँटा निकल जायगा, राजपूताने भर को चैन से सोना मिलेगा।"

"हाय हाय ! यह क्या सोच रहे हो, क्या जमाई से दगा करनी विचारी है।"

"चुप रहो रानी, रोओ चीखो मत, रोओगी तो बात फूट जायगी, फिर यह भेड़िया हम सब को खा जायगा, देखती नहीं हो, ब्याहने आया है पर कितनी फौज साथ लाया है, यह तो

एक दिन में ही घड़सीसर का सब पानी पी जायगी हम और नगर के आदमी प्यासे ही मर जायेंगे।"

"हाय रे क्षत्रिय जाति! क्या करूँ! फूल सी बेटी को कैसे विधवा होने दूँ?"

"रानी, चुप रहने ही में भलाई है।"

"मैं चुप हूँ महाराज, जो जँचे सो करो।"

४

"माँ रोती क्यों हो!"

"बेटी क्या करूँ।"

"मैं चली जाऊँगी इसलिए........"

"हाय बेटी, कहने की बात नहीं।"

"कहो माँ।"

"अरी बेटी, बेटी तो बिना सींग की गाय है, जब माँ बाप ही उस पर अत्याचार करें तो किससे कहे।"

"बात क्या है माँ?"

"तेरे भाग्य फूटे दीखते हैं।"

"समझ गई, तो पिता जी ने दगा बिचारी है, आज ही रात को मुझे सुहाग और रंडापा मिलने वाला है क्यों?"

"हाय, चुप रहो बेटी, बात फूटते ही अनर्थ होजायगा।"

"वाह माँ, बात फूटने की एक ही कही।"

"बेटी, वह बड़ा ज़ालिम है।"

"देखा जायगा माँ, तुम अपना काम करो।"

५

"बस करो सखियों।"

"ठहरो, यह मोतियों की माँग तो भरने दो राजकुमारी।"

"हाय, पैर हिला दिया, मँहदी गिर गई, अभी उसी तरह बैठी रहो।"

"मुझे यह सब नहीं सुहाता।"

"क्यों सुहायेगा, कुमारी जी? अब सुहावना दूल्हा ही सुहायेगा, पर यह फूलों की चोटी तो गूँथने दो।"

"तुम सब बड़ी दुष्ट हो, छोड़ दो मुझे।"

"छोड़ना तो पड़े ही गा पर थोड़ी देर और।"

"बस अब नहीं, जाओ तुम सब।"

"चलो री सखियो, यहाँ से चलें।"

"चलो फिर, कुमारी जी किसी को भेज दें?"

"भारेली को भेज दो।"

"ठीक है—संदेश ले जाने में वही चतुर है।"

"जाओ, बकवाद न करो।"

६

"भारेली !"

"बाई जी राज।"

"कुछ सुना ?"

"नहीं तो !"

"अम्मा को देखा ?"

"भरे हुए बादल सी फिर रही हैं। आँसू रुकते ही नहीं।"

"कारण समझा ?"

"कारण तो समझा हुआ है—प्यारी बेटी की बिदा।"

"अरी बावली, मेरा तो सुहाग और रंडापा सब आज ही हो जायगा।"

"हैं ?"

"कहती हूँ न।"

"क्या बात है ?"

"कान में सुन।"

"अब क्या करना चाहिये।"

"तू भेष बदल कर चुप चाप राघोजी जोशी के यहाँ जा और सब हाल कह आ।"

"अभी चली।"

"पर देख किसी को कानोकान खबर न हो।"

७

(राघो जोशी का घर)

"क्या आपने आज किसी कन्या के ब्याह का मुहूर्त शोधा है ?"

"केवल रावल जी की कन्या उमादे का ब्याह शोधा है।"

"आप नगर में और भी कहीं मुहूर्त शोधते हैं।"

"सारे नगर में इस काम के लिये मैं ही बुलाया जाता हूँ।"

"आप जिस कन्या का लग्न मुहूर्त शोधते हैं, वह कै घड़ी सुहागन रहती है ?"

"तू क्या मुझ से दिल्लगी करती है ?"

"नहीं।"

"फिर ?"

"मैंने एक गड़बड़ी की बात सुनी है।"

"कौन सी बात ?"

"आप एक बार फिर मुहूर्त शोध कर देख लीजिये।"

"मुहूर्त में खोट नहीं है।"

"तो भाग्य में खोट होगा।"

"नहीं, मैंने जन्म पत्र देख लिया है।"

"अजी कर्मपत्र तो नहीं देखा, आज बाई जी का कर्म फूटेगा।"

"क्या रावल जी ने कुछ दगा बिचारी है?"

हाँ।"

"राम राम, राजाओं को धिक्कार है।"

"महाराज, कुछ उपाय कीजिए, धिक्कार देने से क्या होगा?"

"मैं गरीब ब्राह्मण क्या कर सकता हूँ।"

"सब कुछ कर सकते हैं।"

"तू ही बता क्या करूँ?"

"अच्छे जोशी हुए। राजदरबार जाते हैं—और अब मुझ से उपाय पूछते हैं।"

"तू बुद्धिमती प्रतीत होती है—बता क्या करूँ?"

"तुरन्त राव मालदेव के यहाँ जाकर उन्हें सावधान कर दीजिए।"

"बात तो ठीक है।"

"तो मैं बाई जी से कह दूँ।"

"क्या तू भारेली है ?"

"जी हाँ।"

"अच्छा कह दे, मैं अभी जाता हू।"

८

(रावल के महल में)

"रावल जी की जय हो, महाराज बरौठी का मुहूर्त आ गया है, सवारी की आज्ञा दीजिए।"

"अच्छा, बरात वालों को भी कहला भेजो।"

"हाँ, एक बात मुझे मारवाड़ के ज्योतिषियों से पूछनी है।"

"कौन सी बात ?"

"जन्म-पत्र से तो नहीं, पर बोलते नाम से आज राव मालदेव जी को चौथा चन्द्रमा और आठवाँ सूर्य है, दोनों ग्रह घातक हैं, कोई ग्रह बारहवाँ नहीं है, नहीं तो..."

"जाने दीजिए वहाँ ज्योतिषियों ने देख भाल लिया होगा। आप के कहने से व्यर्थ आशंका बढ़ेगी।"

"नहीं, मेरा धर्म है कि उनसे कहकर समाधान करा दूँ।"

"कैसा समाधान ?"

"यही दान-दक्षिणा आदि।"

"यह काम यहीं हमारी तरफ से करा दीजिए।"

"जी नहीं, यह उन्हीं की तरफ से होना चाहिये, मैं सामग्री बता आऊँगा।"

"खैर तो, आप झटपट आ जाइये।"

"बस गया और आया।"

६

(राव मालदेव का जनमासा)

"महाराज, राघोजी जोशी आए हैं।"

"आने दो, वे बड़े भारी ज्योतिषी हैं उन्हें आदर से ले आओ।"

(राघोजी आकर आशीर्वाद देते हैं।)

"पधारिये महाराज, आपका आना कैसे हुआ?"

"कुछ मुहूर्त्त बताना था।"

"कहिए।"

"केवल आप ही को सुनना चाहिये।"

[सब लोग हट जाते हैं।]

"सावधान रावल जी ने दग़ा विचारी है आप चौरी से लौटने न पावेंगे।"

"ऐसी बात है?"

"आप धीर वीर बुद्धिमान हैं अधिक कहने का अवसर नहीं है अब मैं जाता हूँ।"

"आप चिन्ता न करें, मैं सब ठीक कर लूँगा।"

१०

[धौंसे बजने लगे रावल जी अगवानी लेकर आगे बढ़े, राव मालदेव मौर बाँध सेहरा लगा घोड़े की पूजा कर सवार हुए। अगल बगल जीता और कूपा सूरमा थे कमर में दुहरी तलवार थी।"

आगे जाजम बिछी थी, गद्दी तकिये लगे थे, रावल जी ने आगे बढ़ कर स्वागत किया, दोनों गले लग कर मिले, अब निशान का हाथी आगे बढ़ा, दोनों साथ साथ किले में पहुँचे रावजी ने तोरण बाँधा, दोनों राजभवन मसनद पर बैठ गए। भीतरी आँगन में ब्याह की तैयारियाँ हो रही थीं नाज़र राव जी को बुलाने आया, रावल भी साथ उठे। जीता और कूपा ने दोनों ओर से हाथ पकड़ कर उन्हें बैठाते हुए कहा—हमें छोड़ कर कहाँ चले रावल जी, जब तक राव जी लौट न आवें यहीं बिराजिये रावल जी जान जोखिम देख बोखलाए से बैठे रहे। महल में ब्याह हो रहा था, ब्राह्मण वेद मंत्र पढ़ रहे थे। हथलेवा और गठजोड़ा हो रहा था, फेरे फिर गए, ब्याह हो

गया, मालदेव और उमादे पति-पत्नी हो गए। उमादे अपने महल को चली गई। सहेलियाँ राव जी को उमादे के महलों में ले चलीं।]

११

(भारेली के घर पर)

[महल में एक जगह भारेली आदि कुछ सुन्दरियाँ गा रही थीं; राव जी चलते चलते ठिठक गए। खवासें दौड़ीं, एक ने चाँदनी, दूसरी ने सोजनी, तीसरी ने मसनद लगाई, चौथी ने तकिये लगा दिये, दो दो खवासें मोरछल से दाएँ बाएँ खड़ी हो गईं, पाँच सात ने शामियाना खड़ा कर दिया, दो चँवर और पँखा झलने लगीं। चैत की सुहावनी रात, चाँदनी फैली हुई, ठण्डी हवा के झोंके, भीनी भीनी फूलों की सुगन्ध।

भारेली ने आगे बढ़कर मुजरा किया और सोजनी से कुछ हटकर बैठ गई। उसने गानेवालियों से संकेत किया—

'दारूड़ो दाखारो'

तबला खड़का और सारंगी ने सिसकारी ली। गाने वालियों ने आरम्भ किया—

भर ला, ए सुघड़ कलाल दारूड़ा दाखाँ रो, जीवन वारो लाखाँरो। एक खवास ने पन्ने के हरे प्याले में लाल अँगूरी शराब भरकर राव जी के आगे बढ़ाई, उन्हों ने हँसकर ली

और प्याला मुहरों से भर कर लौटा दिया, खवास ने उठ कर मुजरा किया और गले के मोतियों को राव जी पर वार-वार कर गाने वालियों पर फेंक दिया। गाने वालियों ने फिर गाया—

दारू पीवो रण चढ़ो राता राखौ नैन
बैरी थारा जल मेरे, सुख पावेला सैन ॥ दारू०

कलाली ने फिर प्याला भर कर दिया। गाने वालियों ने गाया:—

सोरठ रो दोहौ भलो, कपड़ो भलो सपेत।
नारी तो निबली भली, घोड़ा भलो कुमेत।
दारूडो दाखारो

प्याले पर प्याले मढ़ चले, राव जी मस्त हो सुरा सुन्दरी और संगीत में डूब गए]

१२

(उमादे का रंग महल)

(उमा के यहाँ महफिल सजी थी, मद्य के रत्न जटित पात्र गजक तैयार थी, राव जी को बुलाने भारेली भेजी गई थी, उनके आने की आशा में गीत गाए जा रहे थे,

महलाँ पधारो महाराज हो,
दारूरा मारू, महलाँ पधारो महाराज हो,
कदरी जोऊं छ सोजा वाट हो। महलाँ पधारो०

उमा हंसकर लजा गई। गाने वालियों ने फिर गाया।

गैला गैला भूलियाँ, मेहला पड़ी पुकार।
आवण री वेला नहीं, अलबेला राजकुमार।
महलाँ पधारो]

(दासी का प्रवेश)

"बाई जी राज!"

"रावजी कहाँ हैं?"

"वे भारेली के यहाँ सहेलियों के बीच बैठे हैं, वहाँ 'दारूड़ो दाखाँरो' गाया जा रहा है।"

गाने वाली गारहीं थीं—

बीजलियाँ माडेलियाँ, ऊपर लै रलियाँ।
परदेसी री साजना पतीजे मिलियाँ॥

(उमा क्रोध से)

"खामोश।"

क्षण भर में सन्नाटा छा गया।

"सब बाहर चली जाओ। आरती के थाल के दीपक बुझा दो उसे औंधा करदो।"

१३

(उमादे का रंग महल)

मैं नहीं जाऊँगी जोशी जी।"

"बाई जी, यह कैसे हो सकता है ?"

"मैंने सोच लिया।"

"बाई जी, कल तक तुम्हें राव जी की जान प्यारी थी क्या आज नहीं है, अब भी तो उनकी जान जोखिम में है।"

"खैर, मैं जाऊँगी, परन्तु रावजी मेरे पास न आ सकेंगे।"

"आप जैसा कहेंगी, वे वैसा ही करेंगे।"

"मैं भी आप के साथ चलूँगा बाईजी, यहाँ अब मेरा ठिकाना नहीं है।"

"आप भी चलिए।"

"सुखपाल सेवा में उपस्थित है ?"

"चलिये फिर।" (रोती हुई बैठ जाती है।)

१४

बारात जोधपुर पहुँची, दीवान ने धूमधाम से स्वागत किया कोसों तक सेना और दर्शकों का ताँता बँध गया, उमा एक नये महल में उतारी गई। राव जी के अनेक रानियाँ थीं, नई सौत को देखने की सब को हौंस थी, उनमें स्वरूपदे झाली सब से सुन्दरी थी। राव जी उसके महल में गए तो उसने दौड़कर गले की मोतियों की माला तोड़कर उनपर न्यौछावर की।

"नई रानी के दर्शन हमें भी होने चाहिए।"

"अब इसमें बाधा क्या है ?"

"सुना है महाराजा भट्टानीजी बड़ी मानवती हैं ?"

"भट्टानी क्या है भाटा (पत्थर) है।

(हंसकर) "वाह आपने बड़ा आदर किया, भला भाटा क्यों है ?"

"है ! तो भट्टानी, पर भाटे की बनी है । बड़ा घमण्ड है।"

"वाह । आप से उसका मान भी न सहा गया।"

"मान की भी एक सीमा है, प्रिये"

"महाराज —बड़े घर की बेटी, रूप कुल में श्रेष्ठ, फिर मान न करे, भला मैं गरीब घर की लड़की क्या मान करूँगी।"

"ठीक है, पर है बड़ी कड़ी।"

"चलिये, हम सब साथ चलें, देखें तो।"

"देखा जायगा, अभी उस का मान थोड़ा ठण्डा पड़ने दो।"

१५

(सौतों की सलाह)

"देखा उसका घमण्ड ?"

"बड़ी रानी को तो उसने मान दिया बोली भी उसी से हमें तो पूछा भी नहीं।"

"इसे घमण्ड की पूरी सजा मिलनी चाहिए।"

"वह तो राव जी से रूठी ही है, राव जी को भी उससे रुठा देना चाहिए।"

"सच कहती हो बहिन, जो उसने एक बार भी हँस कर राव जी की ओर देख लिया तो फिर हम कहीं की न रहीं।"

"चुप—राव जी आ रहे हैं।"

"कहो देखली भट्टानी; कैसी है ?"

"बहुत अच्छी, पर अल्हड़ बछेड़ी है।"

"तब दुलत्तियाँ भी झाड़ती होगी।"

"महाराज—हमें क्या, जो पास जाय वह लात खाय।"

"जिसे लात खाना होगा वह पास जायगा।"

"बस बात तो यही है।"

"महाराज—हमें क्या, वह अपनी बराबर तो महारानी जी को भी नहीं समझती।"

"मैं तो जाकर पछताई, अजब अनघड़ है, न आंखों में लाज, न बातों में लोच।"

"अजी वह मिजाज में मरी जाती है, न आए का आदर न गये का मान।"

"महाराज, रूपवती बहुत देखी हैं, पर उसका तो दिमाग़ ही निराला है।"

"गोरी चिट्टी है तो क्या—लक्षण तो दो कौड़ी के भी नहीं। बड़े घर आ गई है, नहीं तो सब मान ठिकाने लग जाता।"

"अभी जवानी का नशा है, कल जवानी ढल जायगी तो सब बल निकल जायगा।"

"देखा जायगा—मैं मालदेव हूँ।"

१६

(अजमेर का किला राव जी का शयनागार)

(आकाश पर बदली छाई थी, रावजी उमा के रूठने से और सौतों के बहकाने से गुस्से में भरे थे, झट जनाने से बाहर निकल आए; आँखों में नशा, दिल में क्रोध और हाथ में खाँड़ा था)

"ड्योढ़ियों पर कौन हाज़िर है ?"

"घणी खम्मा अन्नदाता, पृथ्वीनाथ पधारो, शुभचिन्तक हाज़िर है।"

"अच्छा, आप हैं ईश्वरदास जी, अभी आप जगते हैं ! अच्छा, कोई कहानी तो कहिये।"

"जो आज्ञा विराजिए, सुनिए पृथ्वीनाथ—

मारवाड़ नर नीपजे, नारी जेसलमेर।
तुमरी तों सिन्ध सांतरां, करहल बीकानेर ॥

"बस बारहटजी, आपका यह दोहा तो बिल्कुल ही गलत है।"

"कैसे पृथ्वीनाथ ?"

"जैसलमेर की नारी की प्रशंसा आप करते हैं पर हमें तो वहाँ की स्त्रियों से कुछ लहना नहीं है।",

"क्यों अन्नदाता, यह क्या आज्ञा करते हैं ? जैसलमेर की अच्छी से अच्छी स्त्री उमादे........."

"अजी वह तो फेरों की रात ही से रूठी बैठी है।"

"धन्य महाराज, चलिए अभी मेल करादूँ।"

"बारहट जी, आप चलते तो हैं, पर वह बोलेगी भी नहीं।"

"महाराज मैं चारण हूँ, चारण मरे को बुला सकता है, वह तो जीती है।"

"देखें फिर आप की करामात।"

१७

(उमादे का महल)

"मैं ईश्वरदास बारहट, बाई जी राज से कुछ कहने राव जी के पास से आया हूँ।"

"बाईजी, परदे के पास बैठी हैं आप कहिए क्या कहते हैं।"

"बाईजी, मुजरा, बड़ी खम्मा।"

"............"

"बाईजी राज से मेरा मुजरा।"

"(राव जी धीरे से) मैं कहता न था कि यह न बोलेगी, मुरदा बोले—पर वह न बोले।"

"बाई जी, मैं भी आप ही के घराने का हूँ। इसी से बाई जी—बाई जी करता हूँ। ऐसा न होता तो देखतीं कि आपको और आपके घराने को कैसा लजाता, यह क्या बात है कि मैं तो मुजरा करता हूँ और आप जवाब ही नहीं देतीं।"

(रानी चुप रहती है)

"बाई जी आपने अपने पूर्वज रावल दूदा जी का नाम सुना होगा: जब वे मुसलमानों से लड़कर काम आए, तब उनकी रानी ने चारण हुँपाजी से कहा कि राजा का सिर ला दो मैं सती होऊँगी। पर जब हुँपा जी रणक्षेत्र में गए तो वहाँ कटे सिरों में रावलजी का सिर मिलना मुश्किल हो गया। तब हुँपा जी ने उनकी प्रशंसा करनी प्रारम्भ की, जिसे सुन सिर हँस पड़ा सो तुम भी उसी वंश की हो, वह मर कर भी बोला और आप जीती भी नहीं बोलतीं, क्या तुम्हारे बड़ों का रक्त तुम्हारे शरीर में नहीं है ?"

"बाबा जी, मैं देखना चाहती थी कि आपकी वाणी में कैसा

प्रभाव है, कहिए क्या कहते हैं ? क्यों आए हैं ?"

"धन्य बाई, तुम्हारा जन्म चन्द्रवंश में हुआ है, तुम्हारी सौतें कहती हैं, कि तुम चाँद को चीरकर निकाली गई हो, पर कुछ कलंक है, वह क्या है, यही पूछने आया हूँ।"

"उन्हीं से पूछिए।"

"वे तो स्पष्ट कुछ भी नहीं कहतीं, पर सुना है तुम रावजी से रूठी हो, इसी को वे कलंक कहती हैं।"

"यह तो उनके लिए सुख की बात है।"

"तुम भी खूब हो बाईराज, सौतों को सुखी और पति को दुखी करती हो।"

"रावजी को रानी बाँदी की पहचान नहीं।"

"रानी रानी है, बाँदी बाँदी।"

"इसके लिये आप वचन दे सकते हैं ?"

"हाँ।"

"अच्छा हाथ बढ़ाइये।"

(ईश्वरदास रावजी का हाथ पर्दे में बढ़ा देते हैं।)

"आह ! यह तो वही कठोर हाथ हैं।"

"तो और हाथ कहाँ से आये।"

(उमा उठकर चली जाती है, रावजी भी चले जाते हैं, पर बारहटजी बैठे रहते हैं।)

१८

(उमा का महल)

"बारहट जी भोजन कीजिए।"

"मैं भोजन नहीं करूँगा"

"किस लिए ?"

"मुझे बाई जी का बड़ा भरोसा था, पर उन्होंने मेरा तनिक भी लिहाज़ नहीं किया। मैं तो इसी से रावजी को साथ लाया था। अब तो मुझे यहीं मरना है। क्या कभी बाई जी ने चारणों की चाँदी करने की बात नहीं सुनी ?"

[रानी आती है।]

"आप भोजन क्यों नहीं करते ?"

"चारण यदि किसी झगड़े में पड़ते हैं और राजपूत उनकी बात नहीं मानते तो चारण को चाँदी करके प्राण त्यागना पड़ता है।"

"तो आप क्या मुझ पर चाँदी करेंगे ?"

"अवश्य करूँगा, नहीं तो रावजी को क्या मुँह दिखाऊँगा।

"तो आपने मुझे वचन क्यों नहीं दिया ?"

"राजा-रानी के बीच वचन कौन दे ? बीचवाले का काम मेल करा देना है, सो मैं रावजी को ले ही आया था।

"उन्हें लाने से क्या हुआ ?"

"मेरे प्राणों पर बन आई।"

"आप भोजन तो करें।"

"दूसरे जन्म में करूँगा।"

(भारेली आती है।)

"वारहट जी, बाई जी ने भी अभी भोजन नहीं किया है।"

"वे भोजन करें, उन्हें कौन रोकता है ?"

"भला ऐसा कहीं हुआ है, चारण ड्योढ़ी पर भूखा बैठा हो, और राजपूत जाई भोजन करे।"

"तो बाई जी चारणों का जब इतना आदर करती हैं, तो उनकी बात क्यों नहीं मानतीं।"

"आप क्या कहते हैं ?"

"यही कि राव जी से मेल करलें।"

"राव जी भी कुछ करेंगे या नहीं।

"आप जो कहें वही करेंगे, कहिए हाथ जोड़ें, कहिए पाँव पड़ें !"

"बाबा जी, यह आप क्या कहते हैं, वे मेरे स्वामी और मैं उनकी दासी हूँ, मैं तो रूठने में भी उनसे सब भांति प्रसन्न हूं, वे भी मेरा पूरा मान करते हैं, इसी से जीती हूँ।"

"धन्य बाई, धन्य, अब कहो क्या कहती हो ?"

"आप क्या चाहते हैं ?"

"रूँठना छोड़ दो।"

"मेरा तो जी नहीं चाहता पर ख़ैर लाचार हूँ।"

"राव जी वही करेंगे जो तुम कहोगी।"

"मुझे कुछ कहना नहीं है हाँ कोई बात स्वभाव विरुद्ध न हो।"

"तो राव जी को लाऊँ या सुखपाल और अर्दली मंगाऊं ?"

"अभी नहीं रात को चलूँगी आप भोजन करें।"

"पहिले मैं राव जी से मिल आऊँ।"

१६

(राव जी का महल)

(राव जी की बाछें खिली हैं आज बहुत दिन की रूठी रानी मिलेगी, राज-भवन सज रहा है। जड़नें पातरें इकट्ठी हो रही हैं शराब के पात्र भरे धरे हैं सर्वत्र रोशनी हो रही है गायन प्रारम्भ हुआ। शराब का दौर चला। उमादे को बुलाने बाँदी पर बाँदी आ रही हैं अभी उसका शृंगार ही नहीं निबटा है, माँग में मोती भरे जा रहे हैं, मन मचल रहा है) बाँदी ने कहा—

"पधारिए महारानी अन्नदाता ताकीद कर रहे हैं।"

"आते आते आवेंगे जल्दी क्या है जा भारेली तू कह दे।"

"बाई जी राज मुझे न भेजिये अन्धेर हो जायगा।"

"तू ही जा और लौट कर मेरे साथ चल।"

२०

"वाह भारेली आज तो तुम्हारे खूब ठाठ हैं पिओ एक प्याला।"

"अन्नदाता क्षमा करें बाई जी पधार रही हैं।"

"आने दो फिर, उन्होंने तुझे मेरा मन बहलाने को ही भेजा है।"

"महाराज अनर्थ हो जायगा मुझे जाने दें।"

"बैठ जा, आने दे उन्हें।"

"महाराज आप गजब कर रहे हैं।"

"उस दिन की तरह आज भी एक प्याला दो।"

[भारेली मद्य से प्याला भर देती है उमा आकर देखकर उल्टे पाँव लौट जाती है।]"

"महाराज अनर्थ हो गया!"

(खिड़की से भारेली कूद पड़ती है)

वाह दोनों तोते उड़ गये वारहट जी को बुलाओ।

(वारहट ईश्वरदास आते हैं)

"अब क्या करूँ।"

"अन्नदाता, आपने अनर्थ किया।"

"एक बार फिर मना कर देखिए।"

"जाता हूँ पर कठिन है।"

(जाता है)

२१

(राव जी का कक्ष)

"कहिए वारहट जी आप के तो होश उड़े हैं, खैर तो है ?"

"पृथ्वीनाथ, राज भवन सूना पड़ा है, रानी बुर्ज में जा बैठी हैं, सखियों ने सफेद चांदनी तान कर परदा कर दिया है।

लौंडियाँ पहरे पर हैं। उर्दू बेगमें नंगी तलवार लिये खड़ी हैं, मेरा निकट जाने का साहस नहीं हुआ।"

"क्या भट्टानी बुर्ज में जा बैठीं ? यह क्या किया ?"

"महाराज, बुर्ज का भाग्य खुल गया, आज उस पर सती का वह तेज बरस रहा है जो पृथ्वीराज के सिंहासन पर भी न बरसा होगा। चांदनी का परदा पड़ा है, नंगी तलवारों का पहरा है!

"तब तो उसे मनाना कठिन है।"

"बहुत कठिन, आप ने बहुत अन्धेर किया।"

"अब क्या हो, मैं पछताता हूँ।"

"अभी तो बाई जी दो चार दिन महल में आती दीखतीं नहीं; क्या प्रबन्ध किया जाय?"

"मैं तो कल ही बीकानेर पर चढ़ाई करूँगा, आप यहाँ बुर्ज के पास कनातें खड़ी करा कर चौकी पहरे का प्रबन्ध करा दीजिये। जब उसका मिजाज़ ठण्डा हो जाय तो समझा बुझा कर जोधपुर ले आइये।"

"जो आज्ञा महाराज।"

२२

(बुर्ज)

"बाई से अर्ज़ करो, दीवान हाज़िर है।"

"दीवान जी क्या चाहते हैं?"

"राव जी के हुक्म से यह रामसर का परगना बाई जी राज के नाम लिखा है, सो हाज़िर है।"

"उसका प्रबन्ध हमारी तरफ से तुम स्वयं करो।"

"जैसी मर्जी।"

"ड्योढ़ी पर क़िलेदार ने तम्बू परदे का सब प्रबन्ध कर दिया है, वह सुबह शाम को हाज़िर होगा।"

"उसे इस चाकरी से सिरोपाव किया जाय !"

"जो हुक्म, अजमेर का हाकिम मुजरा करता है।"

"वह क्या कहता है ?"

"बाई जी राज, राव जी ने बीकानेर जीत लिया है। पर शेरशाह हुमायूँ को भगा कर आगरे आ पहुँचा है, बीकानेर के राजा रईस सब उससे मिल कर उसे राव जी पर चढ़ाने को ला रहे हैं, राव जी अस्सी हज़ार सेना ले उससे मोरचा लेने आ रहे हैं, सो किले पर जंगी बन्दोबस्त जारी करने का हुक्म हुआ है, आपके लिये जोधपुर पधारने की मर्ज़ी हुई है।"

"मुझे क्या भय है, मैं राजपूत की बेटी हूँ, विपत आई, तो जल कर नहीं मरूँगी, मर्द की तरह लड़ूँगी, राव जी को लिख दो किला मेरे भरोसे छोड़ दें, और बाकी राज का प्रबन्ध स्वयं कर लें।"

"बाई जी राज, ऐसी ही मर्ज़ी है तो जोधपुर का किला आप अधिकार में कर लें, यहाँ तो भारी मोर्चे की जोखिम है।"

"अच्छा, अजमेर न सही, जोधपुर ही सही, सवारी का प्रबन्ध कर दो। यह मौका न आ जाता, तो मैं यहाँ से जाना चाहती थी।"

२३

(जोधपुर का रंगमहल)

"बारहट जी यह क्या बात है, सौत हमारी छाती पर चली आ रही है, इस बला को टालिये। वह किले का अधिकार लेंगी तो हम उसकी दबैल होकर रहेंगी ?"

"क्या करूँ मेरा भतीजा ईश्वरदास उसे ला रहा है, वह कपूत तो मेरे कहे में नहीं।"

"भट्टानी यहाँ न आने पावे।"

"न कैसे आने पावे, सवारी तो चल चुकी, कल परसों जोधपुर आ ही पहुँचती है।"

"उसे राह ही में रोक दो, हम आपको खुश करेंगी।"

"जाकर देखता हूँ, सवारी कोसाना तक आ चुकी है।"

"जाओ और उसे रोको।"

२४

(कोसाना गाँव)

[रूठी रानी की सवारी आरही थी, आगे निशान का हाथी था। सवारी का ताँता बँधा था, हाथी के पीछे नौबतखाना था, उसके पीछे घोड़ों पर नक़्कारा बजता था जिसकी आवाज़ बारह

कोस से सुनाई देती थी। पीछे सजे हुए ऊँट और चीलों का झंडा हवा में उड़ता दिखाई देता था झण्डे के पीछे रणबंका बरछैत राठौरों का एक रिसाला था, फिर एक कतार बन्दूकचियों की, उनके पीछे तीरन्दाज फिर ढाल-तलवार वाले राजपूत थे, आगे कुछ दूर मैदान खाली रखकर कोतल हाथी और घोड़े चलते थे, उनके पीछे नकीब, चोबदार, सोने-चाँदी के आसे लिए हुए प्रबन्ध करते चलते थे। बारहट ईश्वरदास भी पाँचों हथियार लगाए एक चालक घोड़े पर अकड़े बैठे थे।

आसाजी को देख ईश्वरदास ने घोड़े से उतर मुजरा किया, दोनों खड़े हो सवारी देखने लगे। सवारी बढ़ रही थी।

एक झुण्ड सजी और कसी कसाई पालकियों का आ..., उन में कुछ के पास तीर कमान और तलवारें थीं उन्हीं के झुरमुट में रानी का सुनहरा सुखपाल था, उस पर गुलाबी पर्दा पड़ा था, जिसपर जगह जगह चमकीले नग जड़े थे, जिसपर निगाह नहीं ठहरती थी। सुखपाल के पीछे नंगी तलवारों का पहरा था। इसके बाद ज़नानी सवारियाँ पालकियों, पीनसों और रथों में थीं। उनके पीछे राठौरों का एक रिसाला था और रिसाले के पीछे जुलूस के बाकी कोतल घोड़े, हाथी और ऊँट थे सब के पीछे फ़र्राशखाना, तोपखाना और मोदी आदि लाव-लश्कर की ऊँट गाड़ियाँ थीं।]

[ज्योंही रूठी रानी का सुखपाल वहाँ पहुँचा आसाजी ने ड्योढ़ीदार को पुकार कर कहा—बाईजी से अर्ज करो कि आसा बारहट मुजरा गुज़ारता है और कुछ विनय भी किया चाहता है।

इसके बाद उन्होंने ऊँचे स्वर से यह दोहा पढ़ा—

मान रखे तो पीव तज, पीव रखे तज मान।
दोय गयन्द न बाँधिये एकण खूँटे ठान॥

दोहा सुनते ही रानी ने तुरन्त सवारी रोकने का हुक्म दे दिया सब चकित रह गये। ईश्वरदास ने बहुत जोर मारा पर आसा का जादू चल ही गया। रानी ने वहीं कोसाना गाँव में डेरे डाल दिये, आसा ने ड्योढ़ी पर जाकर कहा—]

"धन्य बाई जी, मान तुम्हारा ही सच्चा और सब कहने की बात है।"

"बाबाजी, वह दोहा फिर पढ़ो, बड़ा सच्चा दोहा है।"

(फिर पढ़ कर) "बाई जी आप सच्ची मानधनी हैं, आपका यह मान अमर रहेगा।"

"बाबाजी, जो यह मान जन्म भर निभे तो बात है।"

"बाईजी तुम्हारे बाद जीता रहा तो तुम्हारा नाम अमर कर दूँगा।"

२५

(केलोह गाँव रूठी रानी का निवास)

"घणी खम्मा अन्नदाता बाई जी राज रावजी वीरगति को प्राप्त हुए।"

"रावजी रण में खेत रहे?"

"महाराज उन्होंने महावीर की मृत्यु पाई।"

"सब रानियाँ सती हो गईं?"

"स्वरूपदे झाली के सिवा सब रानियाँ, पातुरें, खवासें सती हो गईं, सब इक्कीस थीं।"

"झाली रानी सती नहीं हुई?"

"उनके पुत्र ने उन्हें रोक लिया था कि सरदार आ जायें तो उन्हें राजतिलक देने का वचन लेकर सती हों। उन्होंने वचन तो सरदारों से ले लिया पर पुत्र को श्राप दिया कि तूने मुझे पाँच दिन अटकाया इससे तेरा राज अटल न रहेगा। कल वह पगड़ी के साथ सती हो गईं।"

"पगड़ी आई है?"

"कार्तिक सुदी पूर्णिमा को आ पहुँचेगी।"

"अब मैं किस से रूठूँगी, जिस से रूठी थी, वही न रहा तो अब जीकर क्या करूँगी, चिता की तय्यारी करो।"

२६

[चिता तैयार है, बाजे बज रहे हैं, चन्दन चुना है, कपूर अगर के ढेर लगे हैं, दूर दूर से लोग रूठी रानी को सती होते देखने आए हैं, रूठी रानी घोड़े पर चढ़ कर मुहर और रत्न लुटाती, गहने बखेरती बाजार से निकल, चिता में आ बैठी, गोद में पति की पगड़ी थी, आग देने वाला गाँव में कोई न था।]

"देखो यहाँ कोई राठौर है?"

(बूढ़ा जेत मालोत काँपता हुआ हाथ जोड़े आता है।)

"सती माता, मुझ पर दया करो, मैं भूखा मरता मारवाड़ छोड़ यहाँ पेट पालता हूँ।"

"डरो मत ठाकराँ, स्नान करके चिता में आग दे दो, तुम राठौर हो इसी से तुम्हें बुलाया है।"

"सती माता, आग तो मैं दे दूँगा, पर जाजम डाल कर बारह दिन कहाँ बैठूँगा, मेरा तो घर भी इतना बड़ा नहीं, कि जोधपुर की रानी को दाह करके शोक की जाजम बिछा कर बैठूँ।"

"मुंशी हाजिर है?"

"हुक्म अन्नदाता, सती माता।"

"अभी राना जी को हमारी ओर से चिट्ठी लिख दो कि

इस केलोह गाँव का दस-दस हज़ार की पैदा का इस ठाकुर के नाम पुश्त दर पुश्त का पट्टा कर दें।"

"जो आज्ञा माता।"

(पट्टा ठाकुर को देता है, वह स्नान करके चिता में आग देता है, इस प्रकार रूठी रानी ब्याह के सत्ताईस वर्ष बाद इस भाँति सती होती है।)

—: समाप्त :—